

प्रकाशक—

साखचन्द-कोठारी

प्रधानमंत्री

सादर राजस्थानी रिसर्च इंस्टीट्यूट
बीकानेर (राजस्थान)

सन् १९८१

मूल्य २)

मुद्रण—

भारत प्रिंटिंग प्रेस,
मथुरा. (उ प्र)

प्रकाशकीय

श्री साहू राजस्थानी लिखित-इन्स्टीट्यूट बीकानेर की स्थापना सन् १९४४ में बीकानेर राज्य के तत्कालीन प्रधान मंत्री श्री के. एम. पट्टिकर महोदय की प्रेरणा से साहित्यानुयायी बीकानेर-नरेश स्वर्गीय महाराजा भी साबुलसिंहजी बहादुर झाप संस्कृत हिन्दी एवं लिप्येता राजस्थानी साहित्य की सेवा तथा राजस्थानी भाषा के सर्वांगीण विकास के लिये की गई थी ।

भारतवर्ष के सुप्रसिद्ध विद्वानों एवं भाषाशास्त्रियों का सहयोग प्राप्त करने का सौभाग्य हमें प्रारंभ से ही मिलता रहा है ।

सत्ता झाप विपत १९ वर्षों से बीकानेर में विविध साहित्यिक प्रवृत्तियाँ बसाई जा रही हैं, जिनमें से निम्न प्रमुख हैं—

१. बिराल राजस्थानी हिन्दी शब्दकोश

इस संबंध में विविध ओतों से संस्था लक्ष्मण श्री साहू से धनिक शब्दों का सम्मेलन कर चुकी है । इसका सम्पादन आधुनिक कोश के ढंग पर, भविष्य के प्रारंभ कर दिया गया है और अब तक लक्ष्मण तीस हजार शब्द सम्पादित हो चुके हैं । कोश में शब्द व्याकरण, व्युत्पत्ति, उसके धर्म और उदाहरण आदि अनेक महत्वपूर्ण सूचनाएँ दी गई हैं । यह एक अत्यंत विद्यामय योजना है जिसकी सर्वोत्तमक क्रियात्मिकता के लिये प्रचुर इच्छा और धन की आवश्यकता है । आशा है राजस्थान सरकार की ओर से प्राणिन इच्छा-साहाय्य उपलब्ध होने ही निवृत्त बहिष्क में इसका प्रकाशन प्रारंभ करना संभव हो जाएगा ।

२. बिराल राजस्थानी मुहावरों कोश

राजस्थानी भाषा अपने विराम शब्द बंधार के साथ मूल्यवान् से भी समृद्ध है । अनुमानतः पचास हजार से भी अधिक मुहावरों के विविध प्रयोग में लाये जाते हैं । हमने लक्ष्मण दस हजार मुहावरों का हिन्दी में धर्म और राजस्थानी में उदाहरणों सहित प्रयोग देकर संपादन कराया है और शीघ्र ही इसे प्रकाशित करने का प्रयत्न किया जा रहा है । यह भी प्रचुर इच्छा और धन-साध्य कार्य है ।

यदि हम यह विद्यालय संघ को देखें तो यह संस्था के लिये ही नहीं किन्तु राजस्थानी और हिन्दी भाषा के लिये भी एक मोरच की बात होगी।

२ आधुनिक राजस्थानीकरण रचनाओं का

इसके अन्तर्गत विमललिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं—

१ कलामण्डल नवु काव्य : के भी गानुपम संस्कार

२ आर्मे पन्की प्रथम सामाजिक उन्मेष : के भी धीमपन बोली।

३ बरस गाँठ, मौखिक कहानी संग्रह : के भी कुरमीवर व्यास।

‘राजस्थान-भारती’ में भी आधुनिक राजस्थानी रचनाओं का एक अलग स्तम्भ है जिसमें भी राजस्थानी कविताओं का अतिरिक्त और वैचारिक धारित अंश है।

४ ‘राजस्थान-भारती’ का प्रकाशन

इस दिशा में शोधपत्रिका का प्रकाशन संस्था के लिये मोरच की बात है। यह १४ वर्षों से प्रकाशित इस पत्रिका की मित्रों के कुछ कर्म से प्रेरित की है। बहुत बड़े हुए भी इच्छावान् प्रेक्षकों की एवं अन्य कठिनाइयों के कारण वैसा ठीक रूप से इसका प्रकाशन सम्भव नहीं हो सका है। इसका भाग १ अंक १-४ ‘आधुनिक पिछाई’ लेखिकों की विशेषताओं बहुत ही महत्वपूर्ण एवं अमूल्य सामग्री से परिपूर्ण है। यह अंक एक विशेष विज्ञान की राजस्थानी साहित्य-संस्था का एक बहुमूल्य सचित्र कोश है। पत्रिका का अपना अलग भाग शोध की प्रकाशित होने का है। इसका अंक १-२ राजस्थानी के सर्वोच्च महान्विध पृथ्वीराज रावत का सचित्र और बहुत विशेष है। अपने अंग का यह एक ही अंग है।

पत्रिका की सम्पादिका और महान्विध के सम्बन्ध में इसका ही अंक प्रकाशित होना कि इसके परिवर्तन से भारत एक विशेष है अथवा न पत्र-पत्रिका, हमें प्राप्त होती है। भारत के अतिरिक्त राजस्थान देशों में भी हमकी भाषा है न इसके बाहर है। राजस्थानी के लिये ‘राजस्थान-भारती’ अतिरिक्त संग्रहीत शोध पत्रिका है। इनमें राजस्थानी भाषा साहित्य पुरातन इतिहास तथा अति १२ लेखों के अतिरिक्त संस्था के तीन विशेष लेखक का अथवा अर्थ भी अतिरिक्त राजस्थानी और भी अथवा अथवा अथवा की बहुत लेख चुकी भी प्रकाशित की गई है।

५ राजस्थानी साहित्य के प्राचीन और महत्वपूर्ण ग्रन्थों का अनुसंधान सम्पादन एवं प्रकाशन

हमारी साहित्य-विधि को प्राचीन महत्वपूर्ण और भेद्य साहित्यिक कृतियों को सुरक्षित रखने एवं सर्वमुल्य कराने के लिये सुसम्पादित एवं सुदृढ़ रूप में मुद्रित करना कर उचित मूल्य में विक्रय करने की हमारी एक मिशान योजना है। संस्कृत हिंदी और राजस्थानी के महत्वपूर्ण ग्रन्थों का अनुसंधान और प्रकाशन संस्था के सदस्यों की ओर से निरंतर होता रहा है जिसका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है—

६ पूष्पीराज रासो

पूष्पीराज रासो के कई संस्करण प्रकाश में लिये गये हैं और उनमें से सशुद्ध संस्करण का सम्पादन करना कर उसका कुछ अंश 'राजस्थान-बाण्टी' में प्रकाशित किया गया है। रासो के विविध संस्करण और उसके ऐतिहासिक महत्व पर कई लेख राजस्थान-बाण्टी में प्रकाशित हुए हैं।

७ राजस्थान के प्रभाव कवि ज्ञान (ग्यामउक्त) की ७१ रचनाओं की शोध की गई। जिसकी सर्वप्रथम भागभाषी 'राजस्थान-बाण्टी' के प्रथम अंक में प्रकाशित हुई है। उक्त महत्वपूर्ण ऐतिहासिक काव्य 'ग्यामउक्ता' को प्रकाशित की करवाया जा चुका है।

८ राजस्थान के तीन संस्कृत साहित्य का परिचय नामक एक निबंध राजस्थान बाण्टी में प्रकाशित किया जा चुका है।

९ माय्याड सेन के १ लालगीता का संग्रह किया जा चुका है। बीरानेर एवं बीरानेर सेन के संकलित लालगीत पुस्तक के लालगीत नाम लालगीत कोरिया और लालगीत ७ नामक बर्णन संग्रहित की गई हैं। राजस्थानी बहान्तों के दो भाग प्रकाशित किये जा चुके हैं। बीरानेर के बीच पांडुबी के बहाड़े और राजा बरबरी बादि लोक काव्य सर्वप्रथम 'राजस्थान-बाण्टी' में प्रकाशित किए गए हैं।

१० बीरानेर राज्य के और बीरानेर के प्रकाशित कवित्वों का विद्यालय लाल बीरानेर तीन लेख संग्रह नामक पुस्तक के रूप में प्रकाशित हो चुका है।

११ जमरत उद्योग मुहता नैएसी टी क्वात धीर बनोनी घात बंन महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घ को ना सम्पादन एव प्रकाशन हो चुका है ।

१२. बोजपुर के महाराजा मानसिंहजी के सचिव कबिहर उदयचंद मंडापी की ४ रचनाओं का अनुसंधान किया गया है धीर महाराजा मानसिंहजी की कव्य-साधना के संबंध में भी सबसे प्रथम 'राजस्थान भारती' में लेख प्रकाशित हुआ है ।

१३. जैनसमैर के प्रकाशित १ 'हिमांतको धीर 'महि बरा प्रशस्ति' यादि अनेक सम्राट्य धीर प्रकाशित जब बोज-राजा करके प्राप्त किये गये हैं ।

१४. बीकानेर के मस्तपोरी कवि ज्ञानसारजी के ग्रंथों का अनुसंधान किया गया धीर ज्ञानसार प्रकाशनों के नाम से एक घन भी प्रकाशित हो चुका है । इसी प्रकार राजस्थान के महान विद्वान महोपाध्याय समयसुन्दर जी १६३ लघु रचनाओं का संग्रह प्रकाशित किया गया है ।

१५. इसके अतिरिक्त लक्षादाय—

(१) डा सुहजि निचो तंस्तिचोटी समयसुन्दर, पुष्पीराज धीर लोक मान्य तिनक यादि साहित्य सेवियों के निर्बोध-निबध धीर अपत्तिमा मनाई जाती है ।

(२) साप्ताहिक साहित्यिक बोधियों का आयोजन बहुत समय से किया जा रहा है, इसने अनेकों महत्वपूर्ण निबंध लेख कविताएँ धीर क्लानिवा यादि पढी जाती है जिससे अनेक विषय कवीन साहित्य का निर्माण होता रहता है । निचार विमर्श के लिये बोधियों तथा मापण्यलगाओं यादि का भी समय-समय पर आयोजन किया जाता रहा है ।

१६ बाहर से क्वातिप्राप्त विद्वानों को बुलाकर उनके सापेक्ष करवाने का आयोजन भी किया जाता है । डा बामुबैरथरल घटवाल डा कैभारलाथ बल्लभ उय भी कृपणबाध डा भी रामचन्द्र डा अर्यप्रकाश डा उम्नू एलेन डा कुमीतिनुमार बल्लभों डा सिबेरियो-सिबेरी यादि अनेक अन्तर्राष्ट्रीय क्वाति प्राप्त विद्वानों के इस कार्यक्रम के अन्तर्गत आकर ही चुके हैं ।

एत हो क्यों मैं महामन्त्रि पुष्पीराज राठीड घासन की स्थापना की गई है । दोनों क्यों के साधन-अनिवेशों के अविनायक अमरा राजस्थानी बापा के प्रकाश

विद्या जी मनोहर शर्मा एम ए विद्यालय धीर पं श्रीमानजी मिश्र एम ए
इ इलीय मे ।

इस प्रकार संस्था अपने १६ वर्षों के जीवन-काल में संस्कृत हिन्दी और
राजस्थानी साहित्य की निरंतर सेवा करती रही है । प्रादिक संकट से ग्रस्त इस
संस्था के लिये यह संभव नहीं हो सका कि यह अपने कार्यक्रम को निमित्त रूप से
पूर कर सकती फिर भी यद्यपि कष्टाग्रस्त कर मिरते पड़ते इसके कार्यकर्ताओं
ने 'राजस्थान भारती' का सम्पादन एवं प्रकाशन जारी रखा और यह प्रकाश किया
कि नाना प्रकार की बाधाओं के बावजूद भी साहित्य सेवा का कार्य निरंतर चलता
रहे । यह टीका है कि संस्था के पास अपना निजी भवन नहीं है, न प्रत्यक्ष
संघर्ष पुस्तकालय है, और न कार्य को सुचारु रूप से सम्पादित करने के समुचित
साधन ही हैं, परन्तु साधनों के अभाव में भी संस्था के कार्यकर्ताओं ने साहित्य की
को मीन और एकान्त छावना की है यह प्रक्रिया में आने पर संस्था के औरों को
निराश ही बड़ा करने वाली होती ।

राजस्थानी-साहित्य-संसार अत्यन्त विरल है । जब तक इसका अस्तित्व
यथा ही प्रकाश में आया है । प्राचीन भारतीय वाङ्मय के अतम्य एवं अनर्घ रत्नों
को प्रकाशित करके विद्वानों और साहित्यिकों के समक्ष प्रस्तुत करना एवं उन्हें
सुममता से प्राप्त करना संस्था का लक्ष्य रहा है । हम अपनी इस लक्ष्य पूर्ति की
ओर धीरे-धीरे निम्न हटता के साथ बढ़कर हो रहे हैं ।

यद्यपि जब तक पत्रिका तथा कठिन पुस्तकों के अतिरिक्त अन्येषु द्वारा
प्राप्त अन्य महत्वपूर्ण सामग्री का प्रकाशन शक्य हैना भी अभीष्ट था परन्तु
अर्थोन्नति के कारण ऐसा किया जाता संभव नहीं हो सका । एवं भी बात है कि
भारत सरकार के वैज्ञानिक संशोधन एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम विभाग (Ministry
of Scientific Research and Cultural Affairs) ने अपनी
सांस्कृतिक भारतीय भाषाओं के विकास की योजना के अन्तर्गत हमारे कार्यक्रम को
स्वीकृत कर प्रकाशन के लिये रु १२) इस वर्ष में राजस्थान सरकार को
दिये तथा राजस्थान सरकार द्वारा अपनी ही राशि अपनी ओर से मिलाने रुम
रु १) टीका द्वारा की सहायता राजस्थानी साहित्य के सम्पादन-प्रकाशन

हेतु इस संस्था को इस वित्तीय वर्ष में प्रदान की गई है, जिससे इस में निम्नोक्त ३१ पुस्तकों का प्रकाशन किया जा रहा है ।

- | | |
|---|--|
| १ राजस्वानी व्याकरण— | श्री नरोत्तमदास स्वामी |
| २ राजस्वानी गद्य का विकास (श्रीव प्रबन्ध) | डा. शिवस्वरूप शर्मा प्रबन्ध |
| ३ अक्षरराश बीबी टी नवविषय— | श्री नरोत्तमदास स्वामी |
| ४ हमीराव— | श्री अंबरलाल नाहट |
| ५ पद्मिनी चरित्र बीआई— | " " |
| ६ कल्पत विज्ञान | श्री राधेश्वर धारस्वत |
| ७ विनय पीठ— | " " |
| ८ पवार बरा इफेंस— | डा. बहारम शर्मा |
| ९ पुष्पीराज राजेन्द्र प्रबन्धनी— | श्री नरोत्तमदास स्वामी और
श्री श्रीप्रसाद साकरिया |
| १० हरिरस— | श्री श्रीप्रसाद साकरिया |
| ११ पौराणिक कालस प्रबन्धनी— | श्री अमरचन्द नाहट |
| १२ महाभारत पार्श्वी केलि— | श्री राधेश्वर धारस्वत |
| १३ सीताचल बीआई— | श्री अमरचन्द नाहट |
| १४ श्रीमद अष्टादश संस्कृत— | श्री अमरचन्द नाहट और
डा. हरिचन्द्र शर्मा |
| १५ लक्ष्मण और प्रबन्ध— | श्री मधुसूदन मधुसूदन |
| १६ विनयचरित्र इतिहासप्रबन्धनी— | श्री अंबरलाल नाहट |
| १७ विनयचरित्र इतिहासप्रबन्धनी— | " " " |
| १८ कविचर चरित्र न प्रकाशनी— | श्री अमरचन्द नाहट |
| १९ राजस्वानी च इति— | श्री नरोत्तमदास स्वामी |
| २० बीर रस च इति— | " " |
| २१ राजस्वानी के नीति बीआई— | श्री मोहनलाल पुरोहित |
| २२ राजस्वानी अठ नवार्थ— | " " |
| २३ राजस्वानी प्रेम नवार्थ— | " " " |
| २४ अष्टादश— | श्री राधेश्वर धारस्वत |

भूमिका

धौल या बीरता मानव का एक महान गुण है और बीरता की पूजा सभी देशों में सब जगहों में रही है। बीजे तो एक भूमि में मर मिटनेवाले या विजय प्राप्त करनेवाले व्यक्ति को ही बीर कहा जाता है पर भारत में शानबीर और धर्मबीर (कर्मबीर त्यागबीर तपबीर, साधनाबीर, दया-बीर आदि) को भी बीरा हो महत्त्व दिया गया है और धर्म बीर जिसने भारत में हुए हैं उनके सम्मान नहीं मिलेंगे।

बीर एक को नव रत्न में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। गृहकार का छेड़कर और सब रंगों से बीररस की व्याप्ति बहुत अधिक है। बीररस में हृदय की भावना की सृष्टि के साथ धर्म-निष्ठता मुख्यतः विद्यमान है। इसलिए एक और मन होना को एक ही और यदि कोई एक केन्द्रित कर सकता है तो वह बीर-रस ही है। 'साहित्य-वर्णनकार' में 'उत्तम प्रवृत्ति बीर-सत्यता' केवल बीररस को प्रत्यक्ष रखा है और माना है। बीररस का स्थायी नाम उत्साह है और उत्साह के बिना किसी भी धर्म में प्रवृत्ति एवं निष्ठा नहीं होती इसलिए बीररस की जीवन में निराला आवश्यकता है। इतिहास साक्षी है कि किसी भी देश का उत्थान वहाँ के बीर पुरुषों के द्वारा ही हुआ है। जब भी किसी देश में अपना बीर-धर्म स्थापित बिलाल को अपनाया तभी वह नष्ट हो गया। सत्रियों पर विजय करने के लिए ही नहीं पर धारणा की शक्ति को प्रकट करने के लिए भी बीरता की निराला आवश्यकता है। इसीलिए भारत में साधना-जीवों को भी महाबीर की संज्ञा दी गयी है।

राजस्थान बीरों की भूमि है। यहाँ के एक-बादुरे बीरों की बड़ी प्रतिष्ठा रही है। मध्यकाल में पुरुषों ने ही नहीं राजस्थान की नारियाँ में भी

अप्रतिम बीरता दिखायी थी । बीर कथागिन्या ने समय-समय पर राष्ट्र-नर
अपने जीवन हाथों की बरामात धनुषों को बिगाहर उम्ह कमलन कर
प्राप्त किया और अपने पति सेब पुत्रों को भी बीरता ने लिए प्रोत्साहित किया ।
अपनी धीम रखा ने लिए अथवाती हुई और क्वाला म राजस्थान की
अनगिनत नारियो ने अपनी देह का उत्सर्ग किया । किसी देश के इतिहास में
ऐसी बीरता का उदाहरण नहीं मिलेगा । पति के बीर-मति प्राप्त करने पर
पत्निया उनके शक या पसंदी प्रादि किसी विद्व को लेकर बिठा में प्रवेश कर
जाती थी । वे सतियों के रूप में मात्र भी पूजी जाती हैं । बीरो कुमारों
एक सतिया के देश और स्वयं राजस्थान के गांव-गांव में प्राप्त होते हैं ।
बर्नस वेम्स टॉड ने राजस्थान की बीरता का पुस्तक-कंड से नाम किया है । वे
लिखते हैं—

There was not a single flower in Rajasthan which did not overwhelm with its incense of the national valour and sacrifice not a single gale of wind which did not blow with the spirited youths who dashed and dared to adore the goddess of war not a single cottage in which enchanting lullabies of selfless devotion and heroism were not sung; there was not a single house which had not produced a gallant who braved the storms of his country with a ready heart.

अर्थात्—राजस्थान की भूमि में कोई ऐसा फूल नहीं उगा जो राष्ट्रीय
बीरता और त्याग की सुगन्ध में व्याप्त होकर न सूंघा हो वायु का
एक भी ऐसा झेका नहीं उठा जिसकी मधुर के साथ युद्धवेदी के करणों
में साहसी युवकों का प्रयाण न हुआ हो ऐसी एक भी कूटी नहीं थी जिसमें
मातेस्वरियों की गोद में निस्वार्थ समर्पण और बीरता की ममत्वमयी

मारियाँ न पायी गयी हो न कोई एक यी नर वा जिसमे ऐसे बीर की सृष्टि न हुई हो जिसने अपने बंध के सुफागो का तत्परता से सामना न किया हो ।

ता १८ फरवरी सन् १९३७ को राजस्थान-रिसर्च-सोसाइटी कसकता के प्रान्त्य में विश्व-कवि रबीन्द्रनाथ ठाकुर ने सम्पाति-मह से भाषण देते हुए कहा था—

“भक्ति रम का काव्य तो भारतवर्ष के प्रत्येक साहित्य में किसी-न-किसी कोटि का पाया ही जाता है। रघु-कृष्ण को लेकर हरएक प्रान्त में साधारण या उच्चकोटि का साहित्य निर्मित किया है, लेकिन राजस्थान ने अपने रक्त से जो साहित्य निर्माण किया है उसकी ओड़ का साहित्य और कभी नहीं पाया जाता और उसका कारण है राजस्थानी कवियों ने कठिन सत्य के बीच में रहकर बुद्ध के नगरों के बीच अपनी कविताएँ बनायी थीं । प्रकृति का साम्य कर उनके सामने था । क्या आज कोई कवि बसल अपनी मातृकता के बल पर फिर वह काव्य निर्माण कर सकता है ? राजस्थानी भाषा के साहित्य में जो एक प्रकार का भाव है—जो उद्बेग है—वह राजस्थान का घास घपना है वह केवल राजस्थान के लिए ही नहीं सारे भारतवर्ष के लिए पीरव की वस्तु है । राजस्थान का वह साहित्य कवियों के अन्तस्तर से निकला है । अतः यह प्रकृति ने बहुत समीप है । ऐसा सबकुछ बहुत ही महत्त्वपूर्ण होना और यह उचित होता कि घास घपार के नम्याणार्थ इसका सुन्दर-बध से सम्पादन करवाकर इस प्रकाशित करें । मुझे अतिमोक्ष सेन महाशय से हिन्दी-नाम्य का सामाज्य मिला था पर घास जो देने पाया है वह विस्मृत नहीं बन वस्तु है । मुझे उसे घास तक सुनने का मौका नहीं मिला था लेकिन घास मुझे साहित्य का एक महीन मानी मिला है । मैं सुना करता था कि बारण-कवि बुद्ध के समय उरोजना-बर्बद कविताय सुना-सुना कर लोगों को प्रोत्साहित करते रहते थे । पर घास देने उन कविताओं का रसास्वादन किया और मुझे इस साहित्य में बहुत

धीरे मासूम पड़ रहा है। इसका सम्पादन और प्रकाशन देश के लिए बहुत आवश्यक है।

राजस्थानी साहित्य बीर-रस-प्रधान है। चारण कवियों ने बीरो की उत्साहित करने के लिए उनकी एक उनके पूर्वजों की प्रशंसा में हजारों दिग्गज पीठ बनाये हैं। बहुत से बीर-काव्य भी उनके रचित मिलते हैं। बीर-रस के फूलवर बोहे हजारों की संख्या में अब भी प्राप्त हैं। महाकवि सूर्यमल मिश्रण ने बीर-सतसई की रचना प्रारम्भ की थी पर वे २८८ बोहे ही बना पाये। उसकी पूर्ति मोहनजी नामक चारण कवि ने की जिसकी हस्तलिखित प्रति साहित्य-संस्थान जयपुर, में है। सूर्यमल के रचित बीर सतसई के बोहे का कन्हैयालाल सदन आदि द्वारा सम्पादित होकर बंगाल हिन्दी-मण्डल कलकत्ता से प्रकाशित हो चुके हैं। विद्यमान चारण कवियों में श्री नाबूदान महियारिया रचित बीर-सतसई भी प्रकाशित हो चुकी है। बीबनेर के ठाकुर नरेन्द्रसिंहजी ने भी एक बीर-सतसई बनायी है पर वह अभी तक प्रकाशित नहीं हुई। बीर-सतसई आदि तो बीर भी कई कवियों ने बनाये हैं। राजस्थान के अनेक काव्यों में बीर-रस का उत्साहबर्धक और पड़कता हुआ वर्णन है। इन रचनाओं को सुनकर एक बार तो कापरो के दिलों में भी बीरता का उच्चार हो जाता है। रणभूमि में बीर-वीर डोल आदि वाद्यों के साथ पड़े जाते हैं जिससे बीरो के उत्साह में अपरिचित वृद्धि होती थी। ये बीर-गान किसी भी राष्ट्र की वन्दन्य जाती हैं।

राष्ट्र का बल भी सुरक्षा के लिए सूर-बीरता की परम्परा आवश्यकता है। महात्मा गांधी ने अहिंसा का प्रयुक्तपूर्व प्रयोग करके भारत को स्वतन्त्र किया। उन्होंने भी यही कहा है कि कानूनी की अहिंसा वास्तविक अहिंसा नहीं है। जो अहिंसा का पालन नहीं कर सकते वे राज आदि लेकर हिंसा का आश्रय ले सकते हैं पर जागरता का नहीं। इस तरह उन्होंने बीरता को एक नया मोड़ दिया वे सच्चे अहिंसक एवं सत्य-वीर थे। भारत एक बहुत बड़ा राष्ट्र है अब सब लोग बेसी अहिंसा को अनुष्ठानों के सामने खीना खान कर मरने की उद्यत कर बैठे हो पर मारने को नहीं पालन कर सकें यह सम्भव नहीं है।

राष्ट्र के संरक्षण के लिए राष्ट्रवीरता की नितात आवश्यकता है। यह हमारे संनिको में प्रस्तुत 'वीर रसरा हुआ' जैसे प्रबो का धर्मनामिक प्रचार होना वाछनीय है।

माहून-राजस्थानी-रिसर्च-इंस्टीट्यूट, बीकानेर, में ता १२ अप्रैल १९५६ को भारत के स्वामीय प्रतिष्ठा-मन्त्री डा. श्रीमदनम वाटवू महोदय का सुभाषमन हुआ। तब उन्होंने कहा कि राजस्थान वीरो का देश है, यहाँ के वीर-नाम्यों के प्रकाशन से देश को बहुत बल मिलेगा। संनिको में स्फूर्ति और बोध का प्रचार होगा। आपने यह भी कहा कि 'इंस्टीट्यूट' वीर-नाम्यों को तयार करवाकर हमें भेजें तो हम उसकी बहुत-सी प्रतियों के धर्मिण ग्रहण कर पायेंगे। उनके इस निर्देशानुसार 'इंस्टीट्यूट' ने वीर-बोधा का एक समूह हिन्दी-अर्ब-सहित तयार करने के लिए भी नरोत्तमदासजी स्वामी से निवेदन किया और उन्होंने जल्दी दिनों में इस ग्रन्थ को तयार भी कर दिया था पर अप्रमाव से यह अभी तक प्रकाशित नहीं हो सका। भारत-सरकार सेब राजस्थान-सरकार से प्रकाशन-सहायता प्राप्त होने पर अब हमें प्रकाशित करना मभव हुआ है। उसके लिए हम श्रीस्वामीजी और दोनों सरकारों के विशेष धामारी हैं।

जैसे ही वीररस के वीर भी हमारा सोहे धमी तब अप्रकाशित पड़े हैं। जिनमें से कुछ बोधों का एक समूह श्रीवडीप्रसादजी सावरिया ने भी कर रखा है। अपर प्रस्तुत समूह को जनता ने आधानुषय धनताया तो उसे भी सपाशित करवाकर वीर ही प्रकाशित करने का 'इंस्टीट्यूट' प्रयत्न करेगा।

उपाध्याय डा. नरैमानान महून के 'राजस्थान के ऐतिहासिक प्रवाह' नामक ग्रन्थ की धूमिका में उद्धन किया गया है। एनएच धानवे की हम धामारी हैं।

अगरधन्य माहटा
अप्रोवटर, श्री सादस राजस्थानी रिसर्च इंस्टीट्यूट
बीकानेर

प्रस्तावना

बस यह यह सिंगन समथ कि there is not a pretty
 state in Rajasthan that has not had its Thermopylae
 and scarcely a city that has not produced its Leonidas
 राजा और सिंगन भूय गद्य य कि जर्मोथली जैय रससुत्र नेवार करन
 बन बीर मैनिड बरिपो व भी राजस्थान का गाय रस व साधारण
 मौर भी लानी ली रहा है। यहाँ व बीर तथा साधु हरव जागल
 भाट, लही, लही बीर हाजिनी की बरिवाया व। बानिहाग
 बरगुनि बीर भारी तथा गजभरिपर बीर विजय व बाभ्यामर
 ग वय गजागि म जयेग। गव मान है कि बीर राजस्थान भारत
 का बीर बन रहा है अब मान्य राज कि राजस्थान भारत का गाय
 तथा साधु हरव भी रहा है। राजस्थानी मैनिड बीरों को नद
 मैनिड रहे है बीर बीरों की नद मिद है। लगी मैनिड बरिवाग
 नी की बीरग म रही है बीरों की लहनिड लयनग बरि की
 दि वयाग म सिंगनी। हव जनि व बीर-मैनिड व ल्यामव बीर
 लव की लंक है गजा-मैनिड व मै गुरव-बरव-यय वराव की
 नि है बरग-मैनिड व मै बरग विजय की लनि है बीर लय
 दिव म बीर-मैनिड वराव की लनि है। ब-बरव वगुर-म लया म
 ला है—बरव-म व बरव मी ली बरि वुरं लव व लनि व ला
 ल के लय व ल-मैनिड व है।

[illegible]

देहि' । इस बीर जाति के बीर साहित्य में भी श्री वीर-भाव आदि से अन्त तक भरपूर मिलेगा ।

राजस्थानी जीवन की सबसे बड़ी विशेषताएँ उसमें वीरत्व और स्वतन्त्रता-प्रेम है जो राजस्थानी साहित्य में ओठ मोठ मरे हुए हैं । राजस्थान की अभिजाती उसके अनुरूप ही दुर्गा-स्वरूपिणी माता करती है जिन्हें देवी का अवतार माना जाता है और वही रूप में पूजा जाता है । जन्ती का वरोचित स्वरूप राजस्थानी भावनाओं के अनुकूल कैसा सुन्दर व्यक्तित्व किता गया —

बकई डाढ़ बपह, बकई पीठ कमठू-टी ।
बकई माग बपह, बाय बड़े बर बीस-इन ॥

जब बीस मुण्य बाकी माता सिंह पर सवारी करती है तो घुबिबी को धारण करनेवाली बपह की डाढ़ें तड़क जाती हैं, कम्बूप की पीठ बकक छटती है और रोपसाग तथा घुबिबी कंपयमान होकर उगमगमने लगते हैं ! राजस्थानी जीवन का आरम्भ किस प्रकार होता है, वह भी देखिये—

हम्म न देखी आपसी, रण-जेठां मित्र जाय ।
पूत सिक्काई शकई मरख-बवाई मार ॥

माता नवजात शिशु को मूँछों में झुला रखी है । मरने की महिमा की शिक्षा वह तभी से देना आरम्भ कर देती है । माता छोरी देती हुई कहती है कि पुत्र ! मर जाना प्राण दे देना, पर अपनी भूमि को दूसरों के हाथों में न जाने देना ! जो बाबाक जोरियों में ही इस प्रकार 'जन्ती जम्मभूमिख स्वर्गादि गरीयसी' वीर अधिकार-रक्षा का पाठ पढ़ते थे क्योंकि अपने अछोकिङ्क वीरत्व और स्वार्थभ्य-प्रेम से संसार को चरित कर दिया तो इसमें आश्चर्य की क्या बात ? आदि के

गोख की रक्षा पीर-माताओं के हाथ में हाथी है इस शब्द से कीन
हजार कर सकता है ?

राजस्थानी जीवन पुरुष के बाह्य सौंदर्य का महत्व नहीं
है। पुरुष का सचा सौंदर्य हमका भीर और निर्भीक हृदय है।
राजस्थानी जीवन हमी की वामना करना है —

भैंसग तो भैंसा जगै हिरणी जगै सुगठ ।
पान मरकटे कठ जमै थागह थामै बट्ठ ॥

शूदरी के बरसे कुम्ह हाते हैं और हिरणी सुन्दर बसों
का जन्म देती हैं। पर वह सौंदर्य जिस काम का जब बनता
जीवन ही सच संशय में रहता है। एक साधारण पत्ते की
आधान शान ही बचारे भय के मारे काँव छाने हैं और जोय
मकर ही भयान बनता है। अगर शूदरी के बसों का दमिय।
हैमी निर्भीकता का शान के साथ बनता है।

बड़ बाण्ड था। बहुत भोलाभाण और भोला गाथा।
जमही बाकी तो जगदा विष्णु का दा और निहम्मा ही
मममगी थी। पर मुँह का अंगार काया। जमही बाकी न
हैना कि आज जमहा बही जगना (जठ का लहरा) लहरा
बड़-बड़ार हाथ के हाथियों पर काहमण कर रहा है। तिनह
मामन जगै नह का मरण दूगरी का मही दंग था चंद बड़
बाण-बाण्डर बंद रहा है—

दिमदिम धाँस दीमः लता लगीकी मृगः ।

बारी दंडर धाँसो जालिवा जगन ॥

बीर-माता के वृष का असर मला नहीं जा सकता है !

जब हम अत्यन्त कष्ट की स्थिति में होते हैं तो प्रायः माता की याद आती है। हाथ माँ ! चरी माबही ! आदि शब्द हठात् मुँह से निकल पड़ते हैं। बीरमाता ऐसी स्थिति में ऐसे शब्दों का मुँह से निकलना सहज नहीं कर सकती क्योंकि वे शब्द हृदय की दुर्बलता प्रकट करते हैं। राणकदे का अवशेष पुत्र लखी आँखों के सामने मारा जाता है। असहाय बाबू माँ-माँ बिझाता है पर माँ नहीं कहती है—

मायेरा ! मत रोव मत कर रही आँखियाँ ।

कुल में लागै शोक मरता मान संभारजे ॥

करे मायेरा ! मत रो आँखों को ललक मत कर, मरते समय कभी माँ को याद न करना क्योंकि इससे कुल को कलंक लगता है। मरना है तो हँसते-हँसते मरो। दुर्बलता दिखाकर मरण को कटु मत बनाओ।

एक बीरबाला अपने असहाय और कर्तव्य-विमूढ़ देवर को कैसे जोबन्दी और प्रभावशाली शब्दों में कर्तव्य-मार्ग दिखाती है—

राह ! जड़ कमाऊगा, मूढ़ मरोह न रोव ।

मरता मरणा हवा है, राणा हवा न होव ॥

देवर राह ! रोते क्या हो ? कठो मौझों पर लाय हो। मर्ह के लिए मरना हवा है, रोना नहीं। रोना तो निरुपकार अवस्थाओं का काम है।

इन माताओं के बीरपुत्रों का भी कुछ बर्षन सुन लीजिये। पाछ बरस का बालक अलाहाबाद से लोहा लेने को जाता। माता कहती

सम्झा है ? और पति सहन कर सकता है कि उसकी प्राणवह्नी अपनी सहोदरियों में उसके कारण लज्जास का पात्र बनें। ऐसी वीर-पत्नियों का पति यदि ईसते-ईसते आत्मोसर्ग कर दे तो इसमें आश्चर्य क्या ? पर क्या इससे यह सुनिश्चित होता है कि उनके हृदय में क्रोध मात्र नष्ट हो भी नहीं है ? कठोर वातावरण में पलते-पलते क्या उनका जीवन भी इतना कठोर बन गया है कि शुष्क कर्तव्य-परायणता के सिवा उसमें कुछ नहीं रह गया ? नहीं, उन हृदयों में क्रोध मात्रों का धारा भी बहने ही प्रबल वेग से प्रवहमान है जिसकी वे ऊपर से नीरस प्रतीत होती हैं। 'अमाश्रि कठोरणि मुहुनि कुसुमाश्रि' का वे व्यक्त व्यङ्ग्य भी। इसलिये तो पक्षपक्षी हुई चित्तों पर ईसती-ईसती अपने पतियों के सुत शरीर के साथ बह जाती थीं।

एक वीर-शरीर युद्ध में जाते हुए पति से कहती है—

कंठ ! कलीजें हमय कुम्ह, नांह पिरती छांह ।

मुहियां मिछसी गीरवा, मिलै न थय-री बांह ॥

हे पति ! अपने और मेरे दोनों कुशों की ओर देखना। सांसारिक सुख तो ज्ञान के समान आता-जाता रहता है। उसके लिए युद्ध में विमुक्त होकर दोनों कुशों को जर्जर न करना। यदि ऐसा किया तो तुम्हारी इच्छा भी पूर्ण होनी नहीं। जीतने पर अपना सिर तर्जिमे पर रखकर ही सोम, तुम्हारी मियतमा की बांह सिर रखने को नहीं मिलेगी, यह निश्चित समझ रचना।

यह वीरपत्नी जिस समय मृत होती है कि उसका पति युद्ध में विमुक्त हुआ उसी समय में अपने को मियतमा समझ लेती है। फायर की अंधारपिनी होने की अपेक्षा चिता की अंधारपिनी होना वह अधिक पसन्द करती है। उसे विश्वास है कि जबनर इसका पति

सकता है ? कौन पति सहन कर सकता है कि उसकी प्राणबल्लमा अपनी छोड़ियों में उसके कारण उल्लास का पात्र बनें । ऐसी धीर-पत्नियों का पति यदि हँसते-हँसते आत्मोसर्ग कर दे तो इसमें आश्चर्य क्या ? पर क्या इससे यह सुचित होता है कि उनके रूप में कोमल भाव नम को भी नहीं है ? कठोर वातावरण में पलते-फलते क्या उनका जीवन भी इतना कठोर बन गया है कि शुष्क कर्तव्य-परायणता के सिवा उसमें कुछ नहीं रह गया ? नहीं, उन रूपों में कोमल भावों की धारा भी बहने ही प्रबल बेग से प्रवहमान है जितनी वे ऊपर से नीरस प्रतीत होती हैं । बच्चाइयों कठोरपण सुगुनि कुसुमावलि' का वे व्यस्त आदरणीय थीं । इसलिये तो बचकनी हुई बिराहों पर हँसती-हँसती अपने पतियों के सूत शरीर के साथ चढ़ जाती थीं ।

एक धीर-नारी युद्ध में जाते हुए पति से कहती है—

कब ! कभी भी समय कुछ, नाह बिरही जाह ।
मुदियां मिळसी गीदयां मिळी न पय-री बाह ॥

हे पति ! अपने धीर मेरे दोनों कुलों की ओर देखना । सांसारिक सुख तो क्षाया के समान आता-जाता रहता है । उसके लिए युद्ध से विमुख होकर दोनों कुलों का कर्तव्य न करना । यदि ऐसा किया तो तुम्हारी शक्ती भी पूर्ण हानि की नहीं । लौटने पर अपना सिर ठकिये पर रखकर ही सोना तुम्हारी मियतमा की बाह सिर रखने को नहीं मिलेगी; यह विधिवत समझ रहना ।

यह धीरपत्नी जिस समय मृत होती है कि उसका पति युद्ध में विमुख हुआ उसी समय ही अपने को विधवा समझ लेती है । फरार की चिन्तायिनी होने की अपेक्षा बिता की अकस्मायिनी होना वह अपिच्छ पसन्द करती है । उसे बिरास दे कि जबतक उसका पति

बूझा जाता है। विवाह-मंडप में भी वह स्वामी के वीरत्वमय रूप को ही देखती है—

ढोछ सुखंतां मंगळी मङ्गां मूढ बढ़त ।
 बैबरी में पीछाणियो बैबरी मरखो कंत ॥
 मीच ममाके देख्यो, करयो सङ्ग सराह ।
 परखंती घर परलियो ओछी ऊमर नह ॥
 मैं परखंती परलियो बागों मोंहि सवाह ।
 छापो छाव सिखाव कर ओछी ऊमर नह ॥

पति को वह ओछी ऊमर बसक छिप दुख का कारण होने के स्थान पर गौरव का विषय होती है, क्योंकि वह वह भी देख लेती है कि—

मैं परखंती परलियो तारख-री तखिबाह ।
 घर-भर्य छांवी धरतां धरै घर जखिबाह ॥

स्वामी को दुख के बीर-बेरा से सन्तान वह वीर-नारी अपना कर्तव्य अपना अधिकार समझती है। प्राणपिप पति को कमराज के समाने बैठते हुए वह कभी विचलित नहीं होती। वह तो सोस्वास उसे प्रोत्साहित करती है—

पङ्का फिर मत झंझयो पग मग हीम्यो दार ।
 कद मङ्ग प्याम्यो रोत मैं, पर मत प्याम्यो दार ॥
 माम्ये मत लू कंबडा !, तो माम्ये मुझ कोद ।
 मोरी संग-सहेलियो ताम्मी वे मुग्न मोद ॥

प्रायोपमा प्रियतमा के मधुर अमुरोप को पछन करने को किसका जी त करेगा ? उसकी अवज्ञा करने का साहस किसका हो

सकता है ? कौन पति सहन कर सकता है कि उसकी प्राणपन्नमा अपनी सहेलियों में उसके अरण्य उपवास का पात्र बनें । ऐसी वीर-पत्नियों का पति यदि हँसते-हँसते आत्मोसर्ग कर दे तो इसमें आश्चर्य क्या ? पर क्या इससे यह सुचित होता है कि उनके हृदय में कोमल भाव नम को भी नहीं है ? कठोर पातावरण में पलते-पलते क्या उनका जीवन भी इतना कठोर बन गया है कि शुष्क कर्तव्य-परायणता के सिवा उसमें कुछ नहीं रह गया ? नहीं, उन हृदयों में कोमल माधों की धारा भी बहने ही प्रबल वेग से प्रवहमान है बितनी वे ऊपर से वीरस प्रतीत होती हैं । बच्चापि कठोरपि मृदुनि कुसुमापि का वे व्यक्त अद्भुत थी । इसलिये वो पथकरी हुई चिताओं पर हँसती-हँसती अपने पतियों के मृत शरीर के साथ पड़ जाती थीं ।

एक वीर-नारी युद्ध में जाते हुए पति से कहती है—

फँस ! लखीजै समय कुछ, नाह पिरंती बाँह ।
मुदियाँ मिछखी गीतब ! मिछै न बखरी नाह ॥

हे पति ! अपने और मेरे दोनों कुलों की ओर देखना । सांसारिक सुख तो ज्ञान के समान आता-जाता रहता है । उसके बिना युद्ध से विमुख होकर दोनों कुलों को कदाचित न करना । यदि ऐसा किया तो तुम्हारी इच्छा भी पूरा होने की नहीं । छोटने पर अपना सिर तक्षिण पर रखकर ॥ सोना तुम्हारी मियतमा की बाँह सिर रखने को नहीं मिछेगी, यह निश्चित समझ रखना ।

यह वीरपत्नी जिस समय मृत होती है कि उसका पति युद्ध में विमुख हुआ उसी समय से अपने को विषया समझ लेती है । अथवा की अन्त्यापिनी होने की अपेक्षा चिता की अन्त्यापिनी होना वह अधिक पसन्द करती है । उस विरवास है कि जबतक उसका पति

जीवित है, तबतक उसकी सना कभी भाग नहीं सकती। मुझ में
बहर को अकेला बंधन उसको लिए आधारित होनेवाली अपने
जठानी का यह पीरनारी किस विपस्तता के साथ बहर रही है—

भाभी ! बपुर अकेलो साथीजै म बिगार ।

सूझ भरोमो नह-रो पौजां दाहणहार ॥

ह भाभी ! तुम्हारा बेपर अकेला है यह जानकर ठनिक भी साथ
न करो। मुझे अपने प्रति का पूरा भरोसा है। उस अकेले को तुम कम न
समझना। यह अकेला हो समस्त सत्य का विध्वंस करने का पर्याप्त है।

परि मुझ में मारा जाता है। परि का अरत हाथों से यमपत्र का
खीनवाली मोरनारी उस अकेला कैरो खीप सकती है ? उस बिन्दु,
जिसके त्रिगुण में अकेली यह कैसी जियगी ! यह अरत को भी स्पष्ट
ही भांगती है। न परि का झुगु मुगु में भेजते गमव अगीर हाती है
न अरत अचभ सदगमन काल। परि हाथ बन्धत हुए उस जन अरत
का ओर हाथ बन्धती हुई ही यह गमक भाव जानो है। पर बिना
गदग के पूर्ण यह अरत बिना ओ एक भविष्य करवा दया पादती है—

बचो ! ओह गदगता बावद नै करिगार ।

जावो बाव न गतिवदा टासक दहरदिवार ॥

ह अकेल ! मेरे शिवा को अकेल गदगता कर दया न-म के गमव ता
मेरे बिना बाओ भी नहीं बसायी गयो पर अरत मेरे बिना बह बह
अरत बव रह है। अरत में न तुम्हारे नाथ का भी गमग (न बस
रिक्त है।

अरत का हीन गमगदर गमक न न के गमव बाजी न बसव को
दवा पर बिना कीज कराह है।

और गदगताको गमगदर का अरत को गदग कर-एत
रहा है पर बिना के दुरव को पुगी न

कलकत्ता से संसार को कंपायमानकर देनेवाली यह वीर राजपूत जाति
 आज घोर विक्षाम और विनाशकारी शरण तथा अफीम के नशे में
 सुन-सुन सोकर कुत्सित जीवन यापन कर रही है। और मुस्कराता
 हुआ अतीव आज ज्वंग की भयानक इसी हँस रहा है। पर राजपूत
 बाबा का वह तेज अब भी किसी-न-किसी अंश में बचा हुआ है।
 मातृभूमि की दुर्दशा देखकर एक आधुनिक राजपूत रमयी अपने
 नाक पर पंख को फटकारती है—

पगलीन भारत हुयो प्याका-री मनवार ।
 मात्रभूम परतंत्र हो बारबार धिरभर ॥
 दुसमय वेसां हठकर से प्यायै परवेस ।
 राजन बुदब्यां पहर को धरो जनानो मेस ॥
 बिस टापो के सरय को सरबरियै-री पाह ।
 के कंठां बिच वाल को बापरिया-री पाह ॥

मिथर है तुम्ह को प्याकों के शीर-शीर में मातृभूमि को
 पगलीन बना दिया बिदेशी प्रतिदिन देश को छड़कर चकरा धन
 सब समुद्र पार से आ रहे हैं, पर तुम्हारे कानों पर झूँ भी नहीं
 रेंगती। शर्म तो नहीं आती? तुम्हें भर पानी में डूब क्यों नहीं
 मरते? अरे औरत क्यों न हुए। अब भी हाथों में चूड़ियाँ बाज
 को और कमरों में बाघरा (छोँगा) पहन को।

यो सुभाग टापो सगै जइ कायर भरतार ।
 रंजापो लागै गखो होय सूर सरदार ।

इस सुभाग से तो वैभव्य जितना ही अच्छा। अरे! तुम तो
 सिंह-प्रधारण करनेवाले हो। तीतर, छया बटेर, परगोस, सूअर
 का शिकार करके फूँक जाते हो। क्या यही तुम्हारी राजपूती है?

तीतर छया बटेर भर सुस्त सूर सिंघर ।
 इसहां राजपूती नहीं नाम सिंघ रणधार ।

अब भी कुछ हथा है तो—

पक्ष कसूमख पहर हो, कसो कमर तरमार ।

बरखी और फतार से हुयो गुरंग असमार ॥

पाखा फिर मत मजकूमो, पग मत हीमो डार ।

कट मत आम्हो खेत में, पर मत आम्हो डार ॥

भीषण परब की कु-प्रथा से असहाय धनी हुई इस क्षत्रिय बाण
को इतन से ही संशोध नहीं होता । वह फिर कहती है—

सीरा राज-री होय तो हूँ भी बाखू साथ ।

दुसमख भी फिर इस छै प्हाय दो-दो हाव ॥

धम्म है राजस्थान की बीरमारी । जो ऐसा धैर्यी बाछाओं
को जन्म द सकता है उसको अपने घोर पतन अन्ध में भी निराश
होने की आवश्यकता नहीं ।

राजस्थान का यह साहित्य जीवन से अलग नहीं किन्तु इससे
साथ मिला हुआ है । राजस्थान के व पीर साहित्यकार कन्नन के ही
धनी नहीं होते थे तलवार के साथ भी खेलते थे । उनके इस सम्यक्
साहित्य का अमन्तार इतिहास अनन्त बार बरस चुका है ।
एक उदाहरण इन का शोभ संपरस नहीं किया जा सकता ।
महाराणा प्रताप विपक्षिण विपक्ष हो अकबर की अधोमत्या स्वीकार
करने को तैयार हो गया । महाराणा राजपूत जाति की आन की
अन्तिम आशा थी । यह दूरन्य चाहती थी । उस समय अक पीर
अवि-हृदय, जो परतप हाकर भी स्वतंत्रता का उपासक था पराधीन
हान पर भी जिसका हृदय पराधीन नहीं हुआ था इस अन्तिम आश-
तनु का दूरत दग्ध प्रुप्त हो गया । कथान का उसने एक अन्तिम प्रयत्न
दिया और परिणाम से पाठक अपर्युक्त नहीं ।

राजपूतों की यह अमर आन का रचक कौन था ? महाराणा
प्रताप का महार्थि शूभीराज ?

जीमान कलेशाजजी जीबन्धी गेलेका
 सबपुर बाछो की ओर से भेंट ॥

उपोद्घात

संस्कृति राज्य अमेजी के 'इम्पर' राज्य के आधार पर भारतीय भाषाओं में प्रचलित हुआ है। कहते हैं, मानसिक रोटी के अर्थ में प्रथम बार 'इम्पर' राज्य का प्रयोग जार्ज बेन्सन ने किया था। जिस प्रश्न सती के क्षिप जमीन तैयार करने समय कड़क-पावर तथा अन्य अन्यायपूर्ण वस्तुओं को दूर कर दिया जाता है ताकि उसमें बीज हासन पर अच्छी फसल हो सके, उसी प्रश्न मनुष्य के स्वभाव में, उसकी मनावृत्तियों में जो संस्कार, जो परिमार्जन अथवा परिष्कार होता है उसे संस्कृति कह सकते हैं। जहाँ संस्कृति है वहाँ उदारता के अन्वय बरौन होंगे। बँधे हुए तालान का पानी गँदला हो जाता है। स्वच्छ पानी के लिए मुक्त प्रवाह आवश्यक है। जो मनुष्य अपने संकीर्ण स्वार्थों के घरे में आवद्ध रहता है, उसकी मनावृत्ति भी दूषित ही समझिये। ऐसे व्यक्ति को हम संस्कारी व्यक्ति नहीं कह सकते। जिस प्रश्न में एक भी संस्कार-सम्पन्न मानव विचरता करता है, उस स्थान का पाठापरस ही सुरक्षित और आकाङ्क्षित हो उठता है। दूसरों को भलाई करने में जहाँ मनुष्य का सुख मिलने लगता है वहाँ वह अंगला अप्रतिष्ठा के मार्ग को छोड़कर संस्कृति के मार्ग में परापूर्व करता है। पशुओं में जिस तरह स्वार्थ की प्रवृत्ति होती जाती है उस तरह संस्कार-सम्पन्न मानव में नहीं। पशुता बुरा व्यवसाय मानवीय गुणों का विकास ही संस्कृति का प्रमुख लक्ष्य है।

मदरसा और संस्कृति इन दो शब्दों के तारतम्य पर भी विचार कर जना अपराध है। कुछ भाग समानार्थक मानकर

● श्री अन्वय विनयपन्द्र इन भट्टार ●

जयपुर

इनका प्रयोग करते करते जात हैं किंतु दोनों शब्दों में बड़ा अन्तर है। सम्मत्ता यदि बड़ है तो संस्कृति है बड़ के भीतर खनबाना प्राण-वत्त्व। सम्मत्ता यदि पुष्प है तो संस्कृति है उसके भीतर खरे पाली सुगन्ध। एक व्यक्ति अपने मस्तिष्क की सहायता से किसी वस्तु का आविष्कार करता है किंतु उसकी सम्मान को बड़ बड़ा अनायास प्राप्त हो जाती है। मोटर, रेल, वायुयान आदि का यंत्रिक ज्ञान हमें न मी हो तब भी हम इनका बराबर उपयोग कर सकते हैं। ये सब सम्मत्ता के उपकरण हैं, संस्कृति के नहीं। व्यास, ब्रह्मीकि, अक्षिपास गटे और शकसपीयर के प्रयोगों का रसास्वाद कोई शिक्षित व्यक्ति हो कर सकता है। इससे सिद्ध है कि संस्कृति पर कहना हो आविष्कार प्राप्त नहीं किया जा सकता उसके लिए साधन की आवश्यकता होती है। पुद्धि जिस तरह ब्यार नहीं मिलती वही तरह संस्कृति भी ब्यार नहीं मिलती। धन से भी संस्कार नहीं करीये जा सकते। धन हो तो मोटर करीबिये रेडियो का आनन्द उठाये वायुयान में सफर करीबिये किंतु सचार्ज, भारता आदि संस्कार पक्षां से जावगे ? इनको तो हम अपने जीवन में जरितीय करके दिखाना होगा।

सम्मत्ता का अनुकरण हो सकता है संस्कृति का नहीं। मैकेयर का हाथ के कल-धरलाने कुछ सकते हैं, बैक, बीमा-कम्पनी आदि सबकी स्थापना की जा सकती है, साधन इकट्ठे होने पर एक वायुयान पक्षां तक कि परमाणु बम भी जाई भितनी संख्या में तैयार किये जा सकते हैं किंतु वहाँ है वह फैक्टरी वहाँ मीरों प्रताप और पाबू की सजीव प्रतिमार्थे आर्कर देकर बनवायी जा सकें ? अतन्त मानव समुदाय की शक्ति का एक साध प्रयोग करके भी टैगोर, पुद्ध और शंकर आदि का स्नेहना से निर्माय नहीं किया जा सकता। छात्रों, छात्रों ही क्या असंख्य रामानन्धामाओं को मिष्टाकर भी राम और

हम्य नही बनाये जा सकते । सम्भ्रता से सम्बन्ध रखनेवाली यस्तुओं
परि एक बार बन गयी तो सारे संसार में फल जाती हैं और हमका
महज ही नामा नही हो जाता किन्तु विभिन्न संस्कृतियों के सम्पर्क तथा
पटन्रता के कारण संस्कृति के विशुद्ध अथवा विकृत होने की आशंका
बनी रहती है । इस दृष्टि से दूरे जाने पर सांस्कृतिक रक्षा का प्रान
सबसे महत्वपूर्ण हो जाता है । संस्कृति अथवा मानवाचित गुणा को
नष्ट कर परि हम सारे संसार का राज्य भी प्राप्त कर लें तो यह भी
किस कामका ? इसीलिए महारमा गोंबा जैसा सुसंस्कृत मानव आईसक
साधनों द्वारा स्वराम्यप्राप्ति की अपीक्षा करता है । सब तो यह है कि
संस्कृति-क्षोभ से बड़ी हानि इस दुनिया में दूसरी नही ।

किन्तु संस्कृति तो एक अमूर्त माय है, उसके स्वरूप का निर्णय
कैसे हा ? समी दृष्टी में ऐसे महापुरुष अस्त होते हैं जो मानवोचित
गुणों को अपने जीवन में चरितार्थ कर संस्कृति का सचा स्वरूप उदा
कर जाते हैं । राजस्थान में भी ऐसे अनेक महापुरुष हुए हैं जिन्होंने
बलिदान त्यागि-भक्ति, क्षारता तथा प्रतिष्ठा-यजन का दिव्य आदर्श
संसार के सामने रखा है । गुणों की प्राप्ता करनेवाले और अयगुणों
की निर्भीकता पूर्णक भर्खना करनेवाले कवियों का भी यहाँ अभाय
नही रहा । राजस्थान में इस प्रकार के असंख्य शाह और गीत
प्रपञ्चित हैं जिनमें यहाँ के बुद्धपीरों ब्यापीरों और शानपीरों की
गौरव-ग्रथा का अन्तेय हुआ है । जिन घटनाओं में यहाँ के पारणों का
मानवाचित गुणों का निर्दोश दिखलायी पड़ता है य गीता और
शाहों के रूप में कह दिया करते थे । य पद्य पारणों की जवान पर ही
न रहकर सर्प-सुधारण की जवान पर आ जाते थे । बहुत से शाह
तो एक मिश्रित हैं जिनके निर्माताओं का कोई पता नही चकता किन्तु
दिर भी जन-मानस की दार उन पर अहित होन का य आयत्त
आरप्रिय हा गय हैं । किन्तु हमका यह अर्थन समझ जाय कि

राजस्थान के चारण विरहावली बलाननेबाबे निरे चादुआर थ। वे जब कमी कायरता कृष्णता अथवा अन्य किसी प्रकार का अनीशिरा देखते तो अपने बिसहरो' (निन्दा-सूचक शब्दों) द्वारा उसकी भर्त्सना क्रिये बिना नहीं रहते । जिस समाज में गुरे को गुप करने बाधा नहीं होता उस समाज का पतन हो जाता है । बाह्मीकि-यम-यय की सीता ने इसी बात को हृदय में रखते हुए राजय से कहा था—

मूर्त न ते जन कश्चिदस्मिन्निभेषसि स्थितः ।
निवारयति यो न त्वां कर्मणोऽस्माद्विगर्हिषात् ॥
इह संतो न वा संति सतो वा नानुवर्तसे ।
यथा हि विपरीता ते बुद्धिराचार-वर्जिता ॥ (सुन्दर-कांड)

अर्थात् तुम्हारे कल्याण की कामना करनेवाला यहाँ कोई विरहाधी नहीं पड़ता । यदि होता तो क्या वह तुम्हें इस प्रकृत कर्म करने से रोकता नहीं ? अरे ! यहाँ संत क्या हैं ही नहीं अथवा संतों के मार्ग का तुम अनुसरण ही नहीं करते ? सभी वा तुम्हारी विपरीत बुद्धि आचार-विहीन हो गयी है ।

राजस्थान में ऐसी असंख्य ऐतिहासिक किंवदंतियाँ प्रचलित हैं जिनसे यहाँ की संस्कृति पर अच्छा प्रकाश पड़ता है । कुछ जनश्रुतियाँ तो ऐसी हैं जिनसे सुनकर तबीयत फटक उठती है और हृदय में अद्भुत भावनाओं का संचार होता है । अतीत की स्मृति में स्थापित ही रहा आश्चर्य का पाया जाता है और फिर उस राजस्थान का तो चरम ही क्या जिसका महिमाअथ अतीत अनेक मान्योपित गुणों के लिए आज भी स्फूर्ति और प्रेरणा प्रदान कर सकता है । सांस्कृतिक मंदिर की अराजक ज्वालि का जगाव रखन में राजस्थान के चारणों ने जो महत्त्वपूर्ण योग दिया है, उसके स्मरण-मात्र से बिध पुनर्जित हो उठता है ।

मार्चनिंग ने अपनी एक कविता में कहा है कि—जीवन भर मैं संपर्क करता रहूँ, किन्तु मेरी अन्त्यतम इच्छा है कि हे सृस्यु ! जब कभी तू आवे, चुपके-चुपके आकर मेरा प्राणोंत न कर आसना, प्रत्यक्ष होकर मुझसे मुख करना; मैं तो अन्धता ही रहा हूँ यह एक मुख और सही । सृस्यु से बोझ खेने की इस बीर-भावना की बड़ी प्रशंसा की जाती है और वस्तुतः यह सराहनीय है भी किन्तु मार्चनिंग को ही यदि यह बात होता कि भारतवर्ष में राजस्थान जैसा एक ऐसा अद्वितीय प्रांत भी है जहाँ सृस्यु को स्वीकार के रूप में मनाया जाता है, पाप धर्म में स्थान करना जहाँ परम और पवित्र कर्तव्य समझा जाता है तो निश्चय ही जल्दी बाखी प्रफुल्लित होकर प्रशंसा के बहुमुनी अंगारों में फूट पड़ती । राजस्थान का यह मरु-स्वीकार तो एकदम नवीन है और यह कोरी कवि-कल्पना नहीं—यह एक ऐसा समुच्चय ऐतिहासिक तथ्य है जिस पर सहस्रों सुन्दर भावनारों भी न्यौछावर की जा सकती हैं । राजस्थानी सभित्य के आँखों में इस अतीत युग का दर्शन कर इस मरु-स्वीकार का आनन्द तो उठाने—

आज घरे सासू कहै, हररा अचानक काय ।

वहू बलैया हूँसै पूत मरेबा जाय ॥

अर्थात् सासू कहती है कि आज घरमें यह अकस्मात् हर्ष हैसा ? बोह, अब उसे माझस हुआ कि पुत्र धारा-सीर्य में स्थान करने का रहा है और पुत्रपथ सही होने को दुखस रही है । बेरा की बलिवेरी पर जब पुत्र अपने प्राणों को न्यौछावर कर रहा था तब पीर प्रसविनी माता को पुत्र-जन्म से भी अधिक हर्ष का अनुभव होता था—

मुत मरियो हित दस-रे हरयो बंधु-समाज ।

मा नई हरली जलम व, जितरी हरली आज ॥

रक्षपंडी का रास रचकर जहाँ मरु-महोत्सव मनाया जाता

या पुत्र को स्तन-पान कराते समय जो सिधू-रग से आर्तवित हुए करती थी जो कुछ भी मान-मर्मादा की रक्षा के लिए बीहर की गमल में जीवित ब्रज जाया करती थी जो हमेशा उठकर भगवान् मास्त्र को इस प्रार्थना के साथ अर्घ्य देती थी कि हे सविता ! मरी कोल से कभी न भ्रष्टाना जो अपने स्तनों से ऐसे भाग के दुग्धों को पैदा करती थी कि विम्वारों को छलकर कर जितके पैर बढ़ाते ही धृती की पठती थी—

धरती का धर पूजती, दृढता विगम्य ।
ज्योती रजपूताखियों यक्ष-की मन्मथबाध ॥

जहाँ हैं आज के मारियों जो 'हम्म न बंधी आपणी' की सोरी देती हुए पड़ने में पुत्र को इस मरण-महोत्सव का महत्त्व सिद्धता दिया करती थी ! राष्ट्रीय जागरण के इस युग में आज की नारी राजस्थान की इस बीर नारी से क्या निर्भीकता का पदार्थ-युक्त न सीखेगी ?

यदि बाबू ने अपने कर्म्य द्वारा मृत्यु को गौरवामयित किया है जीवन की पूर्ति के रूप में उन्होंने जो मृत्यु का चित्रण किया है वह कमकी बड़ी हीन समझी जाती है किन्तु फिर भी यह वर्तन-शास्त्र ही रहा । गुरुदेव ने बतलाया कि मृत्यु किसी भी प्रकार करने की मृत्यु नहीं वह तो जीवन के अर्न्त प्रकाश में एक विभ्रम-मात्र है माता के एक स्तन से हटकर दूसरे स्तन के लग जाना है । मृत्यु के इस तत्त्व ज्ञान का सैदा मूर्तिमन्त रूप राजस्थानी साक्षि में मिलता है उस पर केवल राजस्थान ही नहीं समूचा भारतपर्यं गौरव में अपना मस्तक उँचा कर सजता है । राजस्थान का इन जाइसे सपूतों में मृत्यु के साथ जो स्निहपाव किया था उसमें स्वयं मृत्यु भी अयभीत हो गयी होगी !

● अपने की मृत्यु प्रति-सोत पर होती है ।

औरता है मरण बराकमो की दावा ॥ (जार्जवर्त)

राज्य और पराक्रम की जैसी बहुत रूपना राजस्थान के कवि की जगती से प्रसूत हुई है उसका पढ़कर आम भी हमारी मुक्ति पट्टा जाती है। एक याददा रखान्त्रण म शत्रु सेना से छोड़ा लेता रहा। युद्ध धरत-धरत उसका मुहल पराशायी हो गया किन्तु फिर भी यह कबंध के दर में लड़ता रहा और उसने सारी सना का सफ़रया कर दिया। थोड़ा का थोड़ा सब उस पीर के बंधन का सही-सलामत ले जाकर गृह द्वार का रहा हुआ तब उसकी स्त्री क्या बगरी है कि—

भइ पिला माधै जीतिया लीला पर स्थायाह ।
सिर भूष्या भोज्य पण्य मासू-रो जायाह ॥

पत्नी रहती है कि मरी मरम का पुत्र कितना भोज्या है— यह अपना सिर ही लक्ष्मण म भूल जाया। हम राज का अस्वाभाविक बदल कोई उमरा जयकास पर सज्जा है पर सिर पर मँडराती हुई मृगु की अरुहन्ता करनवाली पत्नी की हम चकि म पति के अमाधारण राज्य पर हय-पूण आरपय की व्यजना जिस नाटकीय विप्रात्मकता के साथ हुई है वह अद्भुत ही नितान्त अद्भुत है।

किन्तु क्या आरन माया है कि राजस्थान के ये तिलाही मृगु जैसा भयंकर शत्रु के साथ इस प्रकार का राज कैसे राज सक? प्रणाली का बलिदान कोई ईसी-गरन नहीं है। यह तभी संभव है जब प्राणी से भी व्याध कोई महान् आदेश सामन हो। किसी प्रपन बगमया बनगती परं स्तुतिशायिनी भारभारा से अनुप्राणित हुए बिना मृगु का निर्भीकता-नुर्यक विराट आनिगन कभी सम्भव नहीं हो सकता। यदि ऐसा न हो तो रिमी का क्या पदा है या मृगु को विभाविताओ का राज? अरुण कार श्रम्य का रण के निमित्त राजस्थान ने बड़ा भारी इमर्ग किया है। उद्योग्य अभ्युपग आम बलिदान राजा स्वयं शरणागत-रणा भानि बन्दि, राज राज

आन-बान और प्रतिष्ठा-पावन का जो व्यक्त आदर्श राजस्थानी साहित्य में कूट-कूटकर भरा है वह किसी भी सहृदय व्यक्ति का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर सकता है। इतना ही नहीं किसी को बेरा और किसी भी काबू का सबा बीर वसस किसी-न-किसी अंत में अवश्य स्फूर्ति प्रदान कर सकता है। गायत्री-मंत्र में बुद्धि को सत्य की ओर प्रेरित करने के लिए भगवान् सविता से प्रार्थना की गयी है। सूर्य-देव को संबोधित कर निम्नलिखित दोह में पारस में जो इच्छा प्रकट की है उसमें भी मन्त्र की ही पवित्रता और शक्ति भरी है—

मस्ता ऊम्मा माण ! माण ! तुहाण भामणा ।

मरण-विषय लग माण यप्रो असप-राच अ ।

अर्थात् हे सूर्य ! तुम भले वरित हुए मैं तुम पर श्रद्धा-बद्ध होता हूँ। हे कल्प-कुमार ! मेरी इतनी ही प्रार्थना है कि मृत्यु-वर्षण मेरी मान-मर्मादा की रक्षा करेगा।

आत्म-सम्मान की रक्षा के लिए जो बलिदान राजस्थान ने किये हैं उनके स्मरण मात्र से आज रोमांच और दर्पाद्भेक हो जाता है। वह विश्वास होम लगता है कि जिस बेरा को इस प्रकार की महा महिमा-शाली संस्कृति का बल प्राप्त है उसे निराश होने की आवश्यकता नहीं है।

क-हैयसास सहस

सूचिका

पृष्ठ

संग्रहावरसु

१ प्रस्ताविक	१
२ वीर-महिमा	२
३ राजपूनी (वीरता)	४
४ राजपूत (वीर)	५
५ वीर के प्रतीक	
(विषय बराह्मण बचन)	६
६ राजा सिपाही	१६
७ मुख्य सरदार	९
८ स्वाधीनता	२१
९ युद्ध	२३
१० वीर पति	२६
११ वीर पत्नी	६
१२ वीर माता	४७
१३ वीर बालक	४८
१४ बौद्ध	५१
१५ गीत	५२
१६ नायक	५२
१७ चारस	५६
१८ वज्रवीर्य भारत	५१
१९ वीर-बलीराज चामुण्डा	५२
२ उद्बोधन	५६
राजपूत जाति	५२
राजपूत रईस	५७
देवी राजा	५

	१४
२१ स्वतन्त्रता-युद्ध	७२
नवीन क्षत्रिय	७२
बालनयावर तिलक	७३
यात्री	७३
जवाहरलाल नेहरू	७३
क्षमि	७३
२२ साहित्यपी महिमा	७७
२३ जयसङ्कार	८
मनुस्मृतिका	८१
पटिपट्ट—इतिहास प्रसिद्ध वीर	८५
(क) बालवीर	
(बाल ऊनड पोड बळपत्र साचो जयदेव वीर करतुंविह जूलकरलोठ महापत्ता पयसिह श्रीम मिशनविह महापत्ता जयतमिह भीमविह जयार्पिह) ८८	
(ग) वृद्धवीर	
(महापत्ता प्रतापविह, बाबल, रामला जयार्पिह, पयसिह, पटोड वीरबना याव जयमान जयार्पिह पटोड दुर्गावठ पटोड बरूविह वनरीनिह, वस्वार्पिह, गोप विह, भीष्मिह, याव बाबल पयसिह, मुनजविह, महापत्ता मानविह जयविह, याव देवो विह, विह, साधुविह, वृद्धार्पिह, जोरावर्पिह, जयवर्पिह मुनमान विह, सावर्पिह, मुनावर्पिह वगु राठोड ऊनो पणवरेव, श्रीम जानानान)	
मनुस्मृतिका	१२
	१२३

वीर-रस-रा दूहा

मंगलाचरण

बढ़ै बाह बराह बढ़ै पीठ कमहु-री ।
बढ़ै नाग बराह, बाध बढ़ै जइ बीस-हथ ॥

१-प्रस्ताविक

जननी ! जय अहवा जयो कै दाता कै सुर ।
मा घर रहज बामही मती गमाज नूर ॥१॥
'हला न वणी धाप्यी रग-जतां भिड़ जाय ।
पूव सिरापरै पाछयै मरण बढाइ माय ॥ ॥

जय बीस-भुजा देवी सिंह पर छवार होती है तब दूधही को चारण
अनेबाधे बराह को छारें डूब जाती है कमल को पीठ कदक उठती है
और तब बचा दूधही कवित्व हाथ आगते है ।

प्रस्ताविक

१ है माता ! कुछ जना ता जेना जानना जो वा लो दाता है वा
बीर । नहीं तो बॉम्ब ही रहना । निकटमे पुत्र का जनकर अपने बीरव क
तब का मल गैबाना ।

२ अपनी भूमि को किसी को न देना उनके सिध रख-भूमि में
भिड़ जाना'—माता इस प्रकार पुत्र को कृष्ण में मुझात समय ही मरन
को सहिमा मिलाती है ।

॥ धर जाती, भ्रम पशुतवां त्रिषा पशुतां ताम् ।
 ॥ जै सीनू दिन मरख-रा, कहा रंक, कहा राप् ॥१॥
 राहण ! छटु कमाय-गर ! मूख मरोख म रोष ।
 मरवां मरखा हण दे रोया हण न होय ॥२॥
 मरवां मरखा हण दे ऊबरसी गस्तह ॥
 सापुरसां-रा जीव्या बोवा ही मन्वाह ॥३॥

२-वीर-महिमा

हिम्मत किम्मत हाय विन हिम्मत किम्मत नहीं ।
 करै न आदर कोष रर अगह क्यू रागिया ॥१॥
 मर गिया खिर गगनिय नहीं, दुसमय-रा सौ राप् ।
 बे-पडिया ही नापका, सै पडियां-रा राप् ॥२॥

१. जब अपनी भूमि का रही हो जब कर्म फलदा हो और जब
 मारी पर अंकुश पड़ रहा हो—ये तीनों दिन लयके बिन्दु करने के (प्रायः दे
 देने के) दिन हैं चाहे रंक हो वा राजा ।

२. इस अनुप-वारी राहण १ मोक्षों को मरोड़ रो मच । वीरों के बिन्दु
 मरवा इच्छित है रोना उचित नहीं ।

३. वीरों के बिन्दु मरवा इच्छित है । उनकी पार्श्व वीक्षे रर चार्वमी
 (उनके मरने पर भी उनकी कसोपात्तामें लसत में लगी रहेंगी) । लयके
 पुष्पों का जीवन बोवा हो को जी जन्मा ।

वीर-महिमा

१. हिम्मत के ही मनुष्य की कीमत होती है । बिना हिम्मत के
 कोई कीमत नहीं होती । हिम्मत के रहित पुष्प का रही कल्प के समान
 कोई चारु नहीं करता ।

२. वीरोंका कहता है कि जिस पर शत्रु के रौंकों दम-रोष की
 किस्की नहीं होके वे मनुष्य बिना पड़े ही पड़े हुओं के राजा हैं ।

| पोहो पर हाथी पटलु माछा रंभ यणाय ।
 | उ ठामर भोगै जमी अमर किसो अप्पणाय ? ३॥
 | छिर-छिर भट्ठल जे सहे, हाका वाजताड ।
 | त्यां पर हरी बंदरी धरणी अ पुरत्ताह ॥४॥
 | सीगाळो अयगस्सहा जिण कुछ इकन जाय ।
 | तास पुण्णी पाइ मू जल-जल मध्ये वाय ॥५॥
 | बटा ज्यवां कूण गुण, ओणस कूण पिपाह ।
 | म्यां ऊमां धर आपणो गंजी जै अयराह ॥६॥
 | फरि-कठ, भुजंग-मणि, सरणाई सुहदाह ।
 | मली-मोघर करण-धन, पद्मी हाथ मुपाह ॥७॥

१. जो हाथी घोड़ी को धर हाथों को कुछ और माछों को रंभ बनाकर भूमि अ उपभोग करता है (सदा घोड़ी पर रहता है) उनकी भूमि भी दूसरा कौन धरना सकता है (अपने अधिकार में कर सकता है) ?

२. कुछ-भूमि से हटा जाने पर जो बार-बार बारबार के आवाज महसूस है अथवा को भूमि उनके धर को दामी होती है ।

३. जिस कुछ में बड़े सीमोंवाला और उरु ह और लक भी नहीं नहीं होता उसका कपूर पुरानी वाह को जालि होकर के पैर पड़ते हैं ।

४. जैसे पुत्रों के काम देने से बड़ा लाभ और बुद्धियों के प्रत्यक्ष देने से बड़ा हानि, जिस पुत्रों के लगे रहते अपनी भूमि दूसरों द्वारा बह-बुद्धि की जाती है ।

निह के बाह (अबाह) मांर को जालि, दोरी के छरवापन मरी छी के बहावर और कदम का धन—उनके मरने पर ही दूसरों के हाथों में पड़ आये हैं ।

२-रजपूती (भीरता)

सुभो रज-बट परलखो श्री रज-बट भइताय ।
 प्राण जठै रज-बट नही, रज-बट अठै न प्राण ॥१॥
 रज-बट मख बीठी सली, बीठा पखा सु-मह ।
 सिर पद नाथै पद कइ वा कमी रज-मह ॥२॥
 बन मिछ नाथै कम कियो सूर । सुखीजै बोल ।
 मरियो रजपूती मिछै आ बन बीच भमोछ ॥३॥
 रजपूती पावसु किसी करी दुहेछी मोम ।
 म्यु-म्यु जोवै सेछवा तू-तू मूषी होय ॥४॥
 जो करसी किय-री दुखी, आसी किय नूची ।
 आ नह किय-रा बाप-री मगली-रजपूती ॥५॥

१. राजपूत का परलखा दीया-सादा (बहुत सरल) है । ये राजपूती के लक्षण हैं—जहाँ माँ की मोह है वहाँ राजपूती नहीं राजपूती है वहाँ वहाँ माँ की मोह नहीं ।

२. हे सखी ! बहुत भीर देखे पर राजपूती नहीं दिखायी पड़ी । कुछ में सिर सिर बाप भीर फिर भी बड़ लड़का रहे—वही सखी राजपूती है ।

३. परिश्रम करने से बच मिछ जाता है हे भीर ! मेरी बात सुनो पर राजपूती मात्र हे मे से मिछती है, हलखिने बड़ बच की अपेक्षा बहुत कम है ।

४. राजपूती बालक मिलनी (—बोली) भी हो को भी बड़ी कठिन होती है । ज्यों-ज्यों वह पचे जोबकी है (खरा की भाँति बढ़ती है) त्यों-त्यों उछकी कीमत बढ़ती है ।

५. मरित भीर राजपूती को जो करेगा वही को होपी । उसके पास में दिया तुझसे स्वयं का पहुँचेंगी । वे किसी व्यक्ति-विशेष का वाणि-विशेष की बरीती नहीं है ।

४-राजपूत (वीर)

रामस करुणा इन्दिरा नर गुणधान बभूव ।
 पण्ड पिरछा वीरै प्रथी मरणा रजपूत ॥१॥
 नह हली ! छत्र-चम्परा नह बह नमो हूत ।
 ज मरही हित बस-रै हे बै ही रजपूत ॥ ॥
 नह मू पा पन-पान-सू नह मू पा घर हूत ।
 सू पा मरही बस हित बै मू पा रजपूत ॥३॥
 निज-रा स्थारध-साधणा घर-घर पण्डा खपूत ।
 कमर फसै हित बस-रै बै मू पा रजपूत ॥४॥
 रजपूता गुण पूछती हर सखी ! मानूत ।
 घर पड़िया घर झरतै रज भञ्ज रजपूत ॥५॥

१. राज्य करेवाले गुणवान पुरुष बहुत दखे पर दुन्दो पर बुद्ध में
 मायेवाले राजपूत (वीर) बिछ हो दिवावो पवत है ।

२. इ मयी ! राज-सूत्र वीर पत्रों में कोई राजपूत नहीं होता वीर
 न बड़े नाम में कोई राजपूत होता है । जो इस के बिज मरत है वे ही
 राजपूत है ।

३. अधिक पन-पानि का जल मरुकों के द्वारा राजपूत मरुवा
 (मरुवावाली) नहीं होते वीर न जमान के द्वारा मरुवावाली होते हैं ।
 पावो के मरुवा मरुवाकर जो इस के बिज मरत है वे ही राजपूत मरुवा
 होते हैं ।

४. मरुते राजाओं की मित्र करेवाले अनेक मरुत घर-घर में है
 पर जो इस के बिज कमर कमर है वे ही मरुवावाली राजपूत है ।

५. हे बन्नी ! राजपूतों के गुण पत्रों पर । उन्हें सब पता-पता
 जानत देख । अपनी भूमि के बिजे राजपूत राज के नाव बिजे दूध
 पानावाली हो रहे हैं (राजपूत वीर) ।

रख कटिया रख-रख हुया, रख में मिस्सा बहुत ।
हेछी ! कीकर छोड़तां रख है, कै रजपूत ॥६॥

रख कर-कर रख-रख रंगी, रिक बड़े रख-रूत ।
रख सेठी घर ना दिये रख-रख हूँ रजपूत ॥७॥

आ घर सेठी छगणी, रजपूतां कुम्ह-राह ।
बड़यो पब सारां पिता बड़यो धार बाह ॥८॥

रख सेठी रजपूत-री, वीर न भूखे पाव ।
मारह वरसां बाप-रो कहै वीर बंकाव ॥९॥

जात-सभाष न जाय रंघड़ जे बोवा हुबै ।
आरण्य वाग्यां आब रीठ बजावै राखिया ॥१०॥

१ राजपूत युद्ध में कर-करकर कम-कम हो गये और दूरी जग
रज कर्मों में निकल गये । हे सखी ! अब उन्हें कैसे पहचानें कि वे रज हैं
या राजपूत हैं ।

२ राजपूत युद्ध कर-करके युद्ध भूमि के अक-अक रख-रख को
सफिर से रंग देता है और धूल को रज से आच्छादित कर देता है । वह
करकर रख-रख (कम-कम) हो जाता है पर रज घर भी भूमि कण्ट के
हाथ में नहीं आये होता ।

३ वह वीरों के घर की व्यवस्थिति सेठी है वह राजपूतों के
कुल की रीति है—पति के पीछे पिता पर बड़ जाता और कचवार से
करकर भीर-वलि पाता ।

४ युद्ध ही राजपूत की सेठी (व्यवसाय) है । इधर बाप की
राजपूत, बाकस होने पर भी नहीं भूकसा । मारह बर्य की व्यवस्था में ही
सिंह सेठा वह वीर बाकस बाप के पैर का बटुका ले कता है ।

५ आदि का स्वभाव नहीं जाता राजपूत चाहे पुराना हो याव ।
हे राखिया ! युद्ध करने पर वह आकर भयंकर कचवार बजाता है ।

राम रुहे सुमीन-नै, लख केती दूर ?
 आम्सियां आपी पखी तबस हाथ हजूर ॥१७॥
 धन-रै बड़ भयियाप सटस या नर भी सांपर् ॥
 पोरक रै परताप कठग बड़प्पण आठिया ॥१८॥
 छाया-सीतर छार कर हाथ भागै किता ।
 सिपां-तखी सिम्हर कोरठ आयै, किसनिया ॥१९॥
 छाया-सीतर छार हर-काई हाथ करै ।
 सिपां-तखी सिम्हर रमखी मुसच्छ यणिया ॥२०॥
 पदमै पोहंताइ करदापण हर-काइ करै ।
 भारी-में बंसताइ आसू आर्षु रंजिया ॥२१॥
 दय सयी ! मोठा गहा गोम्प-री मरिया ।
 फोइ न पायै काँकरी भद-री भू पडियां ॥२२॥

१ राम सुमीन से पूछते हैं कि खंका कितनी दूर है । सुमीन उत्तर देता है कि आकाशियों के बिजब बहुत दूर है वर उसमयीख के बिजे हाथ के पास ही है ।

१८, धन के बड़ पर तो मूर्ख दुख भी प्रभुत्व पाइ कर लेते हैं वर इ काठिया ! दुखपार्थ के द्वारा बड़प्पण प्राप्त करवा बहुत कठिन है ।

१९, छाया और सीतर जैसे पक्षियों के बीजे बिजबे ही प्यक्ति देखवा करके भलाव है वर बिहो की सिंकार कोह-मेक (निराशा) ही आभा है ।

२०, छाया और सीतर के बीजे हर कोई देखवा करव है वर बिहो की सिंकार देखवा बहुत कठिन है ।

२१, रम-मदह में गाके समथ हर-कोई गर्व करता है वर इ ईजिया ! लखवार की भार में धंलते समथ आँखों में धागू आ जात है ।

२२, हे मधी ! देख बड़े दुर्गों पर गावियों को भदिया खग रही है । वर वीर की ओरही की घात कोई कदरी भी नहीं कक्या ।

गद-तिर नाग पातण मायद-आया हाथ ।
 भद-रै छाड़े मांर-ना म्भर न पाले कोय ॥ २॥
 भू-पदिया भद जे-रना गद म भरिया टाट ।
 ना प्य नह गद भवणा भू-पदिया-री म्भट ॥ २॥
 राग मिभू राभिया भागा मन म्भदिया ।
 गद हू जे-पा राभयी भद गी भू-पदिया ॥ ३॥

१-वीर क प्रताप

सिप

मित्रे मिप बन माद मिग मिरगा सग-नन दिगा ?
 बायपुर जा जाद रद जप-नाग राभिया ॥ १॥
 पवर दुई पद भोम पर द्य न धारे मोद ।
 हाथ-रना वज्र गू दुपा जा भग-नाग न-वीर ॥ २॥

११ दुपों पर आक्रमण करेवाले जाहे के आठ मित्र हो ज क
 है पर वीर को भयभीत पर मित्रों तथा क विजय करके दूध का हाथी है
 १२ दूध गही हाथी ।

१३ ओरों से आक्रमण करवा ह दूर्ग से भेदियों क धाव भर
 है, वा की दूध ओरों क वन का गही नज मकस ।

१४ जो मित्र-दल से दंडाव दूर्ग ह विरक विरजियों के साथ
 वज्र-जो ल करके विरक ह, वीरों के ओर-वर्षा काय विजय दूर्गों क
 दूर्गों क परको है ।

२२ के-१ क

१ दूर मित्रों क से ह ह दोस्त मित्र दूर्गों के मित्र को दूध-
 पीर (दूर्गों का हाथ) वा जा है जकि यह कवि क कहना है
 दूर्गों क वज्र क क क क क क क है ।

२ मित्र क मित्र क मित्र को दूध क मित्र क मित्र को दूध क
 वाह दूध क मित्र क मित्रों के क क क दूर्गों का क क क क है ।

हाथझ बझ निरमै हिचो, सरभर बझो समझ ।
 सीह जकेछा संभरै, सीहां केहू सभ्य ? ॥१॥
 जेजे हाकां भांगमै, सीह कहीजै सोच ।
 सूरं जेही रोखियै, कम्पझ तेही होव ॥२॥
 सीहां बेस-बिदेस सम सीहां किछ बतल ।
 सीह जअ पन संभरै जै सीहां-स बल ॥३॥
 जअ पूझ कर काब, हाथझ बझ मोवाहम ।
 जे माहर मर जाय, रज-अरु मझै न राजिया ॥४॥
 साबूझो किछ ही समै छठियो छापछिया ।
 तो फिय नह जाबूय तहै हाथझ पर हखियो ॥५॥
 साबूझो आपै समो बिचो न काय गिराव ।
 हाक बिबाधी किम भहै, पछ गावियां मरव ॥६॥

१. इजेही के बझ पर जकका इहय कदा निर्बल रहता है । जम्ही परावरी करने में कई क्षमता नहीं होता । सिंह जकेछे ही बजते हैं सिंहीं के कीव छे छाव ? (मित्राणो सिहय के कहव नहीं, काहु न चछे जमाव) ।

२ जो जकेछा ही जालों के भिजल है वही सिंह कहा जाता है । सूरवीरों को वहाँ बेरा जाता है वही हथपल मच जाती है ।

३ सिंहीं के सिजे देह और बरदेस दोहीं जमाव है । सिंहीं के कीव छे स्वदेस ? सिंह किम बनों में जाके हैं के ही सिंहीं के स्वदेस हो बसे हैं ।

४. यदि सिंह मर जा जाव तो भी वह मिट्टी वा बास नहीं जाता ।

५ सिंह किसी कदम दुर्बल और भूला ही छे मो दुधरे के हाथ छे मारे हुने वट्ट को जाके का बिचार नहीं करता ।

६. सिंह जके परावर दुधरे किसी को नहीं भिजता । परावी हुंकार (मर्जना) वह कैसे महज को ? वह तो पारुख के मरने पर भी जच मरता है (पारुख को मर्जना भी नहीं सह सकता) ।

मुह म दिवै पर-भारियै भागा न करै पाव ।
 सावृद्धे साधा गुणां बेह किमो बन-पव ॥१४॥
 मरयो छावम मामलै, धार-भखी बह बाप ।
 पक्यो खंख पीवरै सिपां बहो सराप ॥१५॥
 दुख दूखो पावै, कइ, भग-पठ पाछै भाग ।
 दुख-म कषा ताग जिम तोहै उमर-ठाग ॥१६॥
 भग रिपु नर कोई मुखै मुखै कइक भग-राज ।
 ह्य गज-नीचय सीह-वर दुहुं मकरां काज ॥१७॥
 जिय मारग कइर बुनो, छागी बास ठिय्याह ।
 ते लख उमा सूरसी मइ बरसी हिरयाह ॥१८॥

१४ सिंह दूखो के दिखे दुख जोइय वर मुह नहीं मारवा (दूखे का दिवा दुखा नहीं जाता, अपने पराक्रम से मारकर काटा है) और म भागे दुखों को बाधक करता है । इन सच्चे गुणों के कारण ही दिवाटा के सिंह को बन का राजा बनाया है ।

१५ हे दादू ! सिंह के खिले दुख से मरना अनिवार्य है । वह सबवार की बार पर चढ़ जाता है । खंजीर से वा पिंजरे में बंधा (बकरी काकर बंदी होना) सिंह के खिले बड़ा भारी खरा है ।

१६ सिंह के मार्ग पर दुखरा, कइो जीव चख सकता है ? वह दुख में उल के पाले को काले जाले के समान तोड़ पाबता है (मान्य दे देता है) ।

१७ कई लोग सिंह को मृग रिपु (मृगी का शत्रु) कहते हैं और कई भूत-राज (दूखों का राजा) । डाबियों का पहरा करनेवाले इस सिंह के जिन व दोनो हो दिखेपन हृदय में कसा उपलब्ध करनेवाले हैं ।

१८ जिस मार्ग में सिंह निकला है और जहाँ के बागी को जलकी लंब कम गयी है उस जग की जार हरिष भूखर भी नहीं चारते के नाम भद-भद हो एपेते, उसकी हरिष कभी नहीं चरेंगे ।

परतस्र जंघक पस्त्रियां कोह न जायु भाग ।
 सीहां केय घोष-सू मानीजै डर माग ॥१८॥
 सूतो बाहर नीव सुग साहूओ यच्छनत ।
 बन कांठे मारग यह, पग-पग होल पड़त ॥१९॥
 निपटक सूतो केदरी सो मी मिमुहा पांय ।
 गज-नीहा घीर न धरै बजर पड़ै बप-बाय ॥२०॥
 पात घणा घर पातम्य भायो यह-में आप ।
 सूता महर नीव सुग पोरा दियै प्रताप ॥२१॥
 मानू म्या-रा मारजै पांय जिहां पड़त ।
 दिन पोरे बाहर यसै साहूओ बल्लनत ॥२२॥
 कक्या बूझा मठी है नह कोविग-दास ।
 महर-सू कवणा नरां ! है पवणा जम-वास ॥२३॥

१८ मीरज को प्रायः देखने पर भी कोई भाग नहीं जाता । परन्तु मिहो के पैरों के निशानों को दृष्टकर ही मार्ग में पथिक भबभीत हो जाये है ।

१९ बलशान मिह अपनी मोड़ में मुग की नीव सोबा हुआ है । फिर भी उस बन के पास से जा मार्ग बलशान है उस पर बलशानों के दृष्ट में १९-१९ पर बलशान उठती है ।

२० मिह निपटक सोबा हुआ है । फिर भी उस देखकर हाथी को मीरज पर नहीं घर बाते भीर उछले पांव खोद जाक है । मिह को गंध उबला भैया जान पड़ती है माओ मिह पर बल्ल दूर रहत है ।

२१ घनेक घरी को बलज (घोष) बलाकर मिह अपनी मोड़ में बाया बाय मुग की नीव सो रहत । उमका बलाज ॥ उमका पहरा देना है ।

२२ दिनके बहुत बहरे भगने है उनके मनुष्य मर जात है । बलशान मिह दिना बहरे क हो अपनी मोड़ में रहता है ।

२३ माओ में भरे हुए हीने मल माग, यह कोई बलाज वा हवी बल नहीं, है मनुष्यों । मिह में बलशान बलशान के दृष्ट में बलशान है ।

भस्मां पभाते भीषदां । गरुड सिद्ध-में गात ।
 केरु बाध्य कम्प-री बभूवा कीजो बात ॥२५॥
 गात इतै उल्लेख गज । मांमल नन तह-सूख ।
 जागै नह पद-में गितै सज हावळ सादूख ॥२६॥
 केरु कुभ विहारियो गज-मोती तिरिय ।
 जाये काय जगद-सु आन्य ओसरिय ॥२७॥
 केरु हावळ बाध कर कुवर डिगळो कीप ।
 ईसां नग हर-नृ तुषा दांत डिपतां दीप ॥२८॥
 ऐसें बभूव वसंतदा ओवह अतर कय ।
 सिध कवळ-की मा कहै, गैवर अयल विजय ॥२९॥

२२ हुआ की ? अतीर को सिद्ध-नकर में कई किने (भारी चीर
 सिद्ध-नकर से घेरे हुए) भले ही सिद्ध से अचानक आती वर सिद्ध की
 इस कहानी की बात कोरते हुए करना (उस वक्त भी तुम्हारा बोझ कम
 रहे जब देखते) ।

२३ है उल्लेख हाथी ! वहां कम में एक एक गरुड रह और
 देखों की अचानक को उपासता रह, जब एक सिद्ध अपनी मोह में बंधे को
 उठाकर नहीं आया है (एक वह आता गरुडना बंध ही आया) ।

२४ सिद्ध ने हाथी के कुभल्यक को पीर दिया जिससे पत्र-मोती
 बिपार रहे ? ऐसा प्रतीत होता है मायो काले वादक से अंधे बरसे ही ।

२५, सिद्ध ने अचानक बंध से बल करके हाथी का डेर कर दिया
 (मात हाथा) और हाथों को मोती महादेव को पत्र चर्च कहा भीड़ों को
 मजदूर दिये ।

२६ ओह ही कम क रहनेवाले होते भी वर दोनों में इतना बड़ा
 अन्तर क्यों ? सिद्ध को कोई अड कोशों में भी नहीं परीक्षा वर हाथी
 आज काले में निरुद्ध है ।

गैबर-गल्लै गल्लधियो जहं राखै तहं जाय ।
सिप गल्लधाय ज सई, ता रह अथल विजय ॥३०॥

परम

मूडण सो मूडा जणै हिरणी जणै सुगढ ।
पान खडकडै उठ चलै, बागड चालै यह ॥३१॥
हिरणी फूटरिया जणै बहु पुरण सुगढ ।
मूडण मांझी धंरुडा योपर चालै यह ॥३२॥
मूडण मूडो नी जणै न पिय पहरै ।
म्यड तलै राख साधरै मड जूमजो जणै ॥३३॥
हिरणां साबी सीगही भाखण तजो समाप ।
सूण छोटी हांतलो है पण धरां पाप ॥३४॥

३. हाथी के गले में रस्सी बही रहती है, उसे बन्दकर जिधर वले चीखते हैं उधर ही वह चला जाता है । यदि सिंह हथ प्रकार मज में रस्सी को सहन कर सके तो वह क्या दल जाय वरहे में बिके ।

३१. मूझी कुकण पुत्र जवतो है हिरणी सुन्दर पुत्रों को जन्म देती है । पर है सुन्दर पुत्र वल का पुरका होते ही उठ भावते हैं और वे कुकण पुत्र दल के साथ भीरे-भीरे मरखो से चलते हैं ।

३२. हिरणी सुन्दर पुत्र जवतो है जो सुन्दर होकर भी पक्षियों में भावेराव (भाल आने वाले) होते हैं । मूझी बंके चोरो का जन्म देती है जो दल से भीरे-भीरे चलते हैं ।

३३. मूझी माराव पुत्र नहीं जवतो । वह पीका नहीं पढ़वतो । वह मूझी के मारे, जजोव को मरणा पर मूझेवाले कीरो को जन्म देती है । (मूझेवाले का पीकी भावना जिन मनुष्य पहनता है ।)

३४. हिरणी के गले में रस्सी होत है पर वलका रचनाय भालावे

सूखर सूखी भीह भर, भूखण पहरा देह ।
 झटो नाह निशाम्या । पर क्कभा घोहर ॥१३४॥
 भूखण ! मन व्यर्थद कर, पाणन वेह मिस्रण ।
 मो गमिया को बमिया तो वाग्ग पत्तोण ॥१३५॥
 हेरु परया जण चरो हाओ क्कगां सूर ।
 काहाअ ! भूखण मजै भागां मायर दूर ॥१३६॥
 घेरो-घेरो सब क्कई मूहै चहै न कोय ।
 काहाअ-री म्हाठ-नै रहिया सारा जोय ॥१३७॥
 नै-बंठो पाहा-सुरो ओकल-मल्ल अवीह ।
 मियु बन सूखर सहरै विष बन भमै न सीह ॥१३८॥

का होता है । झुकों के बोझी-बोझी हथुलियां होती हैं पर वे बड़ी-बड़ी
 खेवाली को काट देने वाले होते हैं ।

१२ शूकर घर नींद सोता है, शूकरी पहरा दे रही है । वह कहती
 है—हे मित्रास्तु पति ! उठो, घर को छोड़ो वे घेर लिया है ।

१३ हे शूकरी ! मन में जानेंद कर बमारों को बजने दे । वे
 गरजने पर यदि वे बजते रहें तो समझना कि अचभुच बजते हैं ।

१४ एक तो दूसरे के (कोय को) को चरने लीं और दूसरे कहीं दूसरे
 के डगने पर (सत को) बाहर निकलती हो । शूकरी कहती है कि हे बड़ी
 काँधोवाले बराह ! यदि आतावा पहा तो पहाड़ बहुत दूर है ।

१५ सब कोई कहते हैं कि 'घेर को घेर को' घर सुह के सामने
 कोई नहीं जाता । काँधोवाले शूकर को पण्ड को सारे पक्षे दख रहे हैं ।

१६ हाथी के समान दाँतोवाला भैंसे के समान सुरोवाला,
 पृथ्वाण मक्ख और विभंज मकर जिस वन में फिरता है वध वन में (नद
 को (धन के लारे) नहीं फिरता ।

पावर तज बीभो परो भासर खीपी डार ।
 धाज नही सग अकसो फौजा फरबनहार ॥४०॥

धक्का (धीरी वेस)

धक्का सरीया धक्का ह, की कीजै कैवार ? ।
 जेता भार भय्यपियै सेतो नबनहार ॥४१॥
 आको-अप्यो क्यू फरै, धक्का बापूरार ।
 आहिज पार पतारसी बल सामे ओ भार ॥४२॥
 धक्का पचवै रे धणी ! की तुमजो घन भार ?
 आहे घर-रो आपुगो करू पहावां पार ॥४३॥
 म्यां घर धक्का स-नाथ नू होसी नोज अनप ।
 धक्का ऊठरियो नूक बल गाको भरियो आध ॥४४॥

४ सुघरों के रोख में मैदान को छोड़ दिया और बहादुर का मार्ग
 खे जिबा क्योंकि आज उसके साथ बीबी को काह देनेवाला एकदम
 महत्वाह नहीं है ।

४१ धक्का के समान धक्का ही है । क्या धक्का की आव ? जितना
 भी भार मीना जाता है उतने का वह खींच ख जाता है ।

४२ साधारण लोको का खेकर आवा देवा (इधर उधर) क्यों
 चलता है ? धक्का का बोलनाहिल कर । सामने धक्का (मध-भूमि) है और
 शत्रु में जारी बाधा है । वही पार उतारोना ।

४३ धक्का कहता है—हे माजिक ! जबकि भार का दगरदर क्यों
 उठान होता है ? मारत पार का भार कध पर खेकर मैं बहावी के पार पहुँचा
 दूंगा ।

४४ हे धक्का ! जिन घर में मान में कुछ नू है वह कभी धक्का
 नहीं हो सकता । धक्का का भार हुआ माया के बल बल को पार का पार ।

वस जूठा, वस जूठपा, वस पाकसी रहत ।
 इकम मयूम बावरा रौचाताण करत ॥४४॥
 हुं पाणू भोम्यो मुया, सखी हुयगो बमा ।
 बाबै तिणहिण बासकू ओरु ताकण लग ॥४५॥
 सिर मइ सीगी संपरी पगां न ठंटर बंन ।
 दूय पियलै बासकू वियो महा-भठ कंन ॥४६॥
 हिरण

कंन ! करक न जोकिने हिरण जिंसा की काव ।
 आक नहुँदै पवन भक्त बोर्वा आगळ ज्ञान ॥४७॥
 गरुड

नसबत गरुड न उडकडी तळी विचव तणेह ।
 हांकजिया बुवा हुनै पंजी अवर पुजेह ॥४८॥

४८ इस बैठ गाड़ी में छुटे हुंभे हैं वस सुतवेवाले हैं और व
 मान-बाव कासी बस रहे हैं । पर अक बचक बैठ के निचा उन सीपना
 की कर रहे हैं (गाड़ी को डीक से नहीं खींच पाते) ।

४९ मैंने समझा कि बचक घर गया इसविधे बाड़ा बैठों के काका
 हो गया (कोई सजा बैठ नहीं रहा) । पर कही बाते में अककर बकूना कि
 ताकडन करके बना ।

५० फिर मैं खींच नहीं विचले पैरों में कमी नहीं "बी, दूय बीते
 महाबीर बचके के ही गाड़ी के बीचे अपना कंन दे दिया (बाड़ी का भार
 उठा दिया) ।

हिरण

५१ हे पति ! कइक नहीं जोइनी पाहिजे । हरिण कोव-सा बी
 काके हूँ ? के काक के बचे बचाते ह और पवन का भक्तन करते हैं, फिर भी
 बी जावेवाले बोर्वा के जाये जाते हैं ।

गरुड

५२ कइसी गरुड उडवार की तासी के भो नहीं उडवा; दूसे पंजी
 हाक मारने छ (कइकमने के) ही डीक ही जात है ।

६ साधा सिपाही

धरण्य ऋक न कीप सजरा चाहीजै सुख ।
 खंड पिच्छ गह खीन रीझ-यानरा राजिया ॥१॥
 धरणी गार निछै, साधा मांड सुरमा ।
 भग्या केम मिछै राणा कोप्या, राजिया ॥२॥
 राज रतै सो क्यार रत मन राखी चाखीस ।
 बै चाखीसू मागखा औ क्यारु चाखीस ॥३॥
 गांधारी सा जनमिया कुंठा पाँप जनेह ।
 बै पाचू रण जीतिया पणखक बाह करेह ॥४॥
 साई ! जेहा भीचहा माछ मुहँगै पास ।
 ज्यो आसमा बूर भय, बूर धर्म भय पास ॥५॥

१ कभी कभी सभा का कोई कारण नहीं सिपाही मजबूत होने चाहिये । हे राजिया ! देखो, रीझी और बँहरी के चक्के बँधे बिच्छू दुर्म भी जीत दिया ।

२ बिछे के मार से कभी कभी भीख ई बर भीतर मरुच सुखीर सिपाही है । हे राजिया ! राजाओं के कुपित होनेपर दिव्यत बिने जाने ता भी वे गह विप्लवत नहीं हो सकते ।

३ हे राजा ! यदि रणत हो का चार ही को रखो, चाखीस को मत रखना । क्योंकि वे चाखीसों भागनेवाले हैं और वे चार ही चाखीस के बराबर हैं ।

४ गांधारी के लो दुखों को जगम हवा चार दुष्का ने राँच पुत्र जन । इन राँचों ने ही दुख को जीत दिया । स्वर्ग को भाइभाइ बिज काम का ।

५ हे राजा ! देखे चार सबकों को मईमे मोछ भा घरने बहा बघाओ जिनक काम होन पर भव बूर रहना है और जिनक हू होने पर भव निकर रहना है ।

७ मूढ

सत-हीणा सरदार मत-हीणा राखै मिनस ।
 अस बाधो असवार राम रुखाये, राखिया ॥१॥
 सुष-हीणा सरदार, सुष-हीणा राखै मिनस ।
 अँध घोड़े असवार, राम रुखाये राखिया ॥२॥
 नाम्हा मिनस नलीक, अमरादाँ आहर नहीं ।
 ठाकर बिष-नै ठीक रख-में कइसी, राखिया ॥३॥
 कुमस्य पीतल कुत अँध रीत कर आहरै ।
 हे अँध ठाकर हुँत भारतर सकरा मैरिया ॥४॥
 काँदा काया कमधनाँ की कायो गोदाँ ।
 चूक चाखी ठाकराँ । पाखँतै होदाँ ॥५॥

१. सत-हीन सरदार अपने वहाँ बुद्धिहीन जादूमियों को रक्ता है वह अँधे घोड़े के सवार के समान है, हे राखिया ! इसका रक्खाता राम ही है ।

२. समस्त से हीन सरदार अपने वहाँ बुद्धि से हीन जादूमियों को रक्ता है । वह अँधे घोड़े के सवार के समान है । हे राखिया ! इसका रक्खाता राम ही है ।

३. आँधे आदमी बिना बाकुर के निकट रहते हैं जिसके वहाँ कमराधी का (बीज्य बीरों का) आहर नहीं हे राखिया ! अँध बाकुर को बुद्ध के समान पता चलेगा ।

४. अँधे और पीतल को काँदा एक समान समझकर आहर करता है हे राखिया ! अँध बाकुर से (मिर्जी) पहाड़ ही चढ़े ।

५. रातोंको वे प्याज खाते गोठों में गो आया ! हे बाकुर साहब ! अब देखिये चूक होठ बजते हुए आपके हाथों से आ रही है । (चूक अँध कोश बाकुरों का दिक्करा था) ।

८ स्वामिमक्त

विषय अपणै हाथ-सू तोछै अके करम्म ।
 सो सुकरत अके पाछहै, अके साम-बरम्म ॥१॥
 सूर सोइ पिछाणियै कहै प्रखीरै हेत ।
 पुरण-पुरखा कहै पक्षै तोय न छाडै जेत ॥२॥
 साम अमारै संकड़ा रणपूर्ता आ रीत ।
 जब लग पाखी आपनै, तब लग दूष नबीत ॥३॥
 क्रियन बतन मन-रो करै पापर बीब-बलन ।
 सूर बतन छय-रो करै, बिय-रो दायो जम ॥४॥
 पांऊ भइ पानैत साम-बरम-में सीस है ।
 हर-माय-रै हत कमळ समापै काछिया ॥५॥

१. विषय अपणै हाथों से तरावू लेकर लेकता है । जो पुरुष-कार्य अके रहने में और स्वामि-मक्ति हमारे में (अकेली स्वामिमक्ति सेक्यों पुरुष कर्मों के बराबर है)

२. शूरवीर उसी को जानना चाहिये जो स्वामी के सिद्ध जब भीर जो करकर हुकने हुकने हीं जान फिर भी बुद्ध-भूमि को न छोड़े ।

३. बीरों को यह रीति होनी है कि वे स्वामी का सकलों में बचाते हैं । अब तक (दूष में मिछा) पानी जकटा है तब तक दूष विरिचन रहता है (अब तक भीर जीवित रहते हैं तब तक उनके स्वामी पर कोई आंच नहीं आती) ।

४. कर्मज्ञ जब भी रक्षा के सिद्ध करन करता है कानर मायों की रक्षा के सिद्ध पर भीर उसकी रक्षा के सिद्ध करन करता है जिसमें अन्न रहने खाया है ।

५. पिरुदधारी बाँके भीर स्वामि-धर्म (के वाक्य) में घरना फिर देते हैं । हे काछिया ! वे महादेव को उदमाणा के जिधे भरना फिर भेट कर देते हैं (उनके मित को महादेव जबनी उदमाणा में चारन करे हैं) ।

मर सोई, पैदां पई नीछ विषमां चैक ।
 नैय बचानुँ साह-रा आप-कळेजो केक ॥६॥
 राग-रखे बम भाष, सिर-साटै-रो सुरमा ।
 म्यां-रो हक रह आय राम निमानुँ राबिया । ॥७॥
 बिन माथे बाडै हम्म लोडै करम उधार ।
 जिख सूर-रो नाचु छे मर बाधै तरवार ॥८॥
 पर-बळ पाई भूमरा साह जुहारै भाष ।
 एणी । इसका रावुवां हाथां नीम बंठाव ॥९॥
 पूनीजै गज-मोहिवां सखी । मरों मुख बाज ।
 नाह नि-कोहो आयियो, करे अनाऊ काज ॥१०॥

१. बीर बही है जो मुख में स्वामी का पदके धिरवा है और जब भीख मागकर स्वामी के पैरों को धावे को कमरती है जब यहका होख में आकर अपना कलेजा उसकी ओर फेंककर स्वामी के पैरों की रक्षा करता है ।

२. मूरखीर छकवार के बल सिर के पदके की हुई अमाई काटा है (जीविका के पदके में सिर पैदा है) । उसका हक संसार में रह जाता है । परमात्मा उसकी बात को विमता है ।

३. जो सिर का जावे पर भी लैवाधों को कमरते हैं और स्वामी का फल चुकाकर मुख-भूमि में मोठे हैं उन बीरों का स्मरण कर बोझा छकवार बांधते हैं (कानों को मल्लुप्त होते) ।

४. जो बाधों का झुककर कूपते जुझे लज्जु सेवा का संहार करते हैं और फिर आकर स्वामी को धन्यम् करते हैं और चबिच जुओं के (बाधों के उपचार के) जिन्हे राणी स्वर्ण लक्ष्मी हाथों से भीम पीसती है ।

५. राणी कहती है ' हे सखी ' बीरों की भुजाधों की पूजा काह गज मोहिनों से करनी चाहिये क्योंकि उनसे पहले ही सब काम स्वर्ण पूरा कर दिया और स्वामी को बिना बाधों के मुक्ति का जोरा जाये ।

हैं बख्तवारी साबियां, भाख नह गहयाह ।
 बीया मोठी-हार ज्यू पासे ही पबियाह ॥११॥
 गुराणी ! सतियां भजै नून समापो खेर ।
 नूनी जिय दिन जायसी तिय दिन केय अखेर ॥१२॥
 ठग्याही ! सतिया भजै मेजो नून सरां न ।
 माया जिय दिन मांग्या तिय दिन बेर करं न ॥१३॥
 पखी ! सोख्य नून-री कमी दिखायो काय ।
 खरां पैसी खीक्यो, म्हाय रो खिर जाय ॥१४॥

६ युद्ध

बोझ-दमामा वाजिया कसिजण जागा बाण ।
 सूरं रज्जी-वयामजा कायर तबै पण ॥१॥

११ मैं स्वामी के सामियों पर बख्तवारी हूँ जो भाग नहीं गये
 किन्तु हरे हुये हार के मीठियों के समान स्वामी के पास ही युद्ध में मिले ।

१२ स्वामिमण्ड कीरों की किर्तों कहती है हे ठगुरानी ! खेर भर
 पाय हो जिस दिन तुम्ह हमारी बुद्धियों की आवश्यकता होगी उस दिन
 हेर क्या ? (उस दिन बुद्धियां देदे, पति को युद्ध में लेकते हम हेर नहीं
 करेंगी) ।

१३ स्वामिमण्ड कीरों की किर्तों कहती है हे ठगुरानी ! तुम हमारे
 पर आटा नहीं भेजती । जिस दिन तुम हमारे बुद्धियों के खिर मांगती उस
 दिन हम हेर नहीं करेंगी ।

१४ हे रज्जी ! लावारण सूरं जाये को कमी क्या दिखायी हो ?
 जाये का बदला देने में सबसे पहले मेरे पति का खिर मागना ।

१ बोझ-मुद्ध नयारे बाहि युद्ध के बाज बजने लगे और तब कप्तान जाये
 लगे । कीरों के जांबंद-बयाहनों की रहीं हैं और कायर बाण बोध रहे हैं ।

और राग सब रागणी सिंपूरो सुझाव ।
 सिंपू जब ही गावै, पुइसां पके पिछाव ॥२॥
 छठ थंवावण पचमुल ! बाजा बाजण बम्मा ।
 ज सूरु तो छठ मिहै छे कायर ता भम्मा ॥३॥
 औरा की फल बागियां कइयो बाग छंझल ।
 गुहै धली-बा गावणा तो मायै प्रवाळ ॥४॥
 भाखर बाब्यां संत-जन बंन बम्मां रचपूत ।
 ओता ऊपर ना छै आठू गांठ कपूत ॥५॥
 जग-मह बाब्यां ओत निच पर फा पाछा दिवै ।
 रचपूती-म रेत, राख नबीखी राबिया ! ॥६॥
 आइव जै आचार, बेम्मां मन आओ बपै ।
 समझ कीरती-सार, रंग छै ब्यां-नै राबिया ! ॥७॥

१ और सब राग रागिनीको माल है, सिंपू राग सब २ माल है ।
 जब थोड़ी पर जीव पड़ते हैं तब सिंपू राग जाता जाता है ।

२ है पाँच मुक्तों वाले सिंद (बीर) । छठ, छुड़ के जाने बजने छये ।
 पछि तू बीर है तो उरुमर छपुलों से निच जो बीर यदि कायर है तो
 भाग पछ ।

३ औरों के बागसे छे क्या काम ? बड़बिराछे छिंद ! तू जान ।
 स्वामी के घरबनेवाली नगावे छै ही छिर पर (छै ही बज पर) बज रहे छै ।

४ आचार के बजने पर इरवर-मछ और छुड़ का बाजा बजने पर
 बीर उठ पड़ते ह । इससे पर जो नहीं उठते ह वे पूरी तरह कुटुभ हैं ।

५ रच केम में ठकवार की लड़ी बजने पर जो पैर पीके देते ह
 उनकी राखपूती पर ह राबिया ! तू निरिचल होकर रेत बाक ।

छुड़ और सङ्कमबहाल में निच का मग बजने की ओर बहता है
 (उल्लासित होता है) बीर जो बस की ही सार समझते हैं, है राबिया ।
 ओछे मुक्तों की जान है ।

कस साधै जण-जण यहै, कस बाधै करमाळ ।
परछ भवाँ भर कस्यराँ टहलहियाँ ब्रजमाळ ॥१॥

आपे ही जाणावसो मलो न होगी धमा ।
कै मांगाय हरसावियाँ कै छत्रजियाँ दामा ॥२॥

मासहतो घर-आंगण, सन्धी । सहलो घाम ।
तो जाणू पिय मासहयो जं मरहै समाम ॥१०॥

हको भ्रत न घर रहै पथ गया समझाय ।
जद घर वंटी नख कछचा कबिया समर सिषाय ॥११॥

सूर न पूछै टीपणो सुगन न हेरै सूर ।
मरणा-नू संगळ गिबै समर बहै मुख नूर ॥१२॥

८. प्रत्येक व्यक्ति लक्ष्मणार कमकर बँचता है और अकड़कर बचता है । पर बीबी और कान्हो की पहचान कुछ कम नगारा बजने पर होती है ।

९ जो समूह में भड़क होया वह स्कल ही मालूम हो जायगा—या जो बाँध के सीकने पर या लक्ष्मणार के उठने पर ।

१० हे सन्धी ! गाँव में या घर के आँगन में डाक से फिरना सहज है, माता गाँव फिरता है । मिरा पठि डाक से फिरनेवाला है वह में तब समझूँगी जब वह कुछ मृमि में डाक से फिरता ।

११ सारे मार्ग कुछ में जाने को थमव रह है, घर पर जेक नी नहीं रहवा चाहता । पथ जबको समझाने गये कि कमरना उचित नहीं । जब जमीन का बँदबारा हुआ था तब तो वे नहीं थमवें थे पर धात्र जब कुछ में जाना है तब थमव रहे हैं ।

१२ बार न तो कबान (शुभाशुभ सुहृत्) पड़ते हैं और न यहुन देखते हैं । वे मरण को संगळ समझते हैं । कुछ-मृमि में उनके मुख पर तेज चला है ।

सिध न पूछै चंद्र-बद्ध, ना जायै घर-विष ।
 समझा ठठै बेरछो क्या जायै त्यां सिध ॥१३४॥
 कछियो परगढ़ आप-री सीस दिवै ह्यारों ।
 वधै न ऊमर कायरों, घटै न सुभारों ॥१३५॥
 कटकां तबछ राहबिषा होय मरवों हल ।
 साज करै मर जीपदा । वैसे कहै घर चढ़ ॥१३६॥
 अके कर पैस बिलगिबै अके कर समाय साज ।
 मय कह जागणपुर चढ़हु साज कहै, भिड़ राज ॥१३७॥
 अण्ण-विमपासी जीपदा । बायर । कबू दौबै ?
 मरसो कोठै सोह-रै ऊबरसी चौक ॥१३८॥

१३ सिध न तो कभी चन्द्रमा का बन्ध पूछता है और न घर ही जानता है । वह तो सहसा लकड़ा ही उठता है और जहाँ उ वहाँ उठे सिद्धि पाठ होती है ।

१४ ककवाणमख अपने सारे साथियों को लीज देता है कि । की बख बड़ नहीं जाती और मुह में कक्येबख बोटों की उड़ पर जाती ।

१५ चौकों में बगारे बख रहे । मरहों में (बीर दुस्नों में) मच गया । झुंका बड़ती है कि है जीव । रण में धड़क मर जा और । की साबला कहती है कि (भागकर) घर चला जा ।

१६ थक और जीवन अपनी ओर खींच रहा है दूसरी तरफ अपनी ओर । जीवन कहता है कि (छोड़कर) दियो चले चलो घर कहो है कि है । मुह म भिड़ साभा ।

१७ है अविश्वसी जीव । है कायर । इस प्रकार क्यों भागता यदि मरना होगा तो छोड़े क कद कहे में भी मर जायगा और यदि न होगा तो इसे नाम अज्ञान में भी बच जायगा ।

શિવ ગણે તા જાન હ, જગ જાણે રહિયે ।
 સ્વરૂપે જુ મનિયે ખા મળાં મનિયે ॥૧૦॥
 અમર-દેવતાં મન-અર્ચા મહા મુદાગજ નમ ।
 અમ પ્રભાં-આ વાવરાં વાર મહા મુખ ચાન ॥૧૧॥
 અમ પ્રભાં-પી વાવરાં વાર મહા મુખ ચાન ।
 મુદાગજે ત્રિ દેમુદા ન ખાતે અમ ॥૧૨॥
 પીર મહા મુખનાં નદ પ્રાપ્તિ નાત્રી ।
 રૂપેનાં મ મન જાવડે, મુદાગજનાં પાત્રી ॥૧૩॥
 રૂપે જન્મ મ અમર પ્રાપ્તિ વાર મહા મહા ।
 મુદા અમર ॥૧૪॥ મહા અમર વાર મહા મહા ॥૧૫॥

होम घसकटै हल मिमै बजै सुहृद डहल ।
अयर कपै थक पकू मरै त सूर निरंक ॥२३॥

आवस मरै अनेक भव भाजै केता भरम ।
टीकम राखी ठेक भंस धरणा-री, मैरिय ॥२४॥

सूर क्पाकै छर छरै सूर अनोप्यो चाल ।
सूर हास कर रागिय सूर जगत-री हास ॥२५॥

भव रज पहिया कट पकै पावो मुकै न मेर ।
सूरज उगा आधमै पावो फिरै न फेर ॥२६॥

रहै कितो दिन पापुषा, आवर करै पयाण ।
घर आवर पर जेमही सूर्य रै तन प्राण ॥२७॥

२३. बघाये बज रहे हैं भीमों भिन्न रही हैं बीर प्रसन्न होकर हैं
रहे हैं कायर काँप रहे हैं थक गिर रहे हैं भीर दूरबीर भर रहे हैं ।

२४. जहाँ जमेकों शक हूँ-हूँकर गिरते हैं और खिलने ही को
भरम प्रोकर भगा चलते हैं उस मुद् में हो भरिवा ! जमवान ही ने
विभाते हैं

२५. बीर लुकी झाँकी क साव कहते हैं । बीरों को जान हो मिरत
होती है । बीर अथवा काम हास कर रणत हैं । बीर स्वयं जयत को हा
(२५८) हैं ।

२६. मुद् के बिजे बड़ा हुआ बीर मुद् में करकर गिर जल
पर बीजे नहीं औरका । लुई जल्य जाने क बाहू भरत हा जाता है व
कारिज नहीं औरका ।

२७. आवर क घर भूमि और उमी प्रवार बीरों क शरीर में प्राण
बिजने दिन जहानम बने रहते हैं । आवर के पावकर जल ही जाते हैं ।

[illegible]

१०. कीद पति

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

ବର୍ଷ ୧୯୫୫-୫୬ ମଧ୍ୟରେ ଲାଗୁ ହେଉଥିବା ବର୍ଷର ମୂଲ୍ୟାଙ୍କନ

10. The page is not too close to the gutter.

100-443887-100

16 (41 03 001 500 0) 001 000 1 0 0 00, 11

1. The results of the study are as follows:

1 2 3 4 5 6 7 8 9 10 11 12 13 14 15 16 17 18 19 20 21 22 23 24 25 26 27 28 29 30 31 32 33 34 35 36 37 38 39 40 41 42 43 44 45 46 47 48 49 50 51 52 53 54 55 56 57 58 59 60 61 62 63 64 65 66 67 68 69 70 71 72 73 74 75 76 77 78 79 80 81 82 83 84 85 86 87 88 89 90 91 92 93 94 95 96 97 98 99 100 101 102 103 104 105 106 107 108 109 110 111 112 113 114 115 116 117 118 119 120 121 122 123 124 125 126 127 128 129 130 131 132 133 134 135 136 137 138 139 140 141 142 143 144 145 146 147 148 149 150 151 152 153 154 155 156 157 158 159 160 161 162 163 164 165 166 167 168 169 170 171 172 173 174 175 176 177 178 179 180 181 182 183 184 185 186 187 188 189 190 191 192 193 194 195 196 197 198 199 200 201 202 203 204 205 206 207 208 209 210 211 212 213 214 215 216 217 218 219 220 221 222 223 224 225 226 227 228 229 230 231 232 233 234 235 236 237 238 239 240 241 242 243 244 245 246 247 248 249 250 251 252 253 254 255 256 257 258 259 260 261 262 263 264 265 266 267 268 269 270 271 272 273 274 275 276 277 278 279 280 281 282 283 284 285 286 287 288 289 290 291 292 293 294 295 296 297 298 299 300 301 302 303 304 305 306 307 308 309 310 311 312 313 314 315 316 317 318 319 320 321 322 323 324 325 326 327 328 329 330 331 332 333 334 335 336 337 338 339 340 341 342 343 344 345 346 347 348 349 350 351 352 353 354 355 356 357 358 359 360 361 362 363 364 365 366 367 368 369 370 371 372 373 374 375 376 377 378 379 380 381 382 383 384 385 386 387 388 389 390 391 392 393 394 395 396 397 398 399 400 401 402 403 404 405 406 407 408 409 410 411 412 413 414 415 416 417 418 419 420 421 422 423 424 425 426 427 428 429 430 431 432 433 434 435 436 437 438 439 440 441 442 443 444 445 446 447 448 449 450 451 452 453 454 455 456 457 458 459 460 461 462 463 464 465 466 467 468 469 470 471 472 473 474 475 476 477 478 479 480 481 482 483 484 485 486 487 488 489 490 491 492 493 494 495 496 497 498 499 500 501 502 503 504 505 506 507 508 509 510 511 512 513 514 515 516 517 518 519 520 521 522 523 524 525 526 527 528 529 530 531 532 533 534 535 536 537 538 539 540 541 542 543 544 545 546 547 548 549 550 551 552 553 554 555 556 557 558 559 560 561 562 563 564 565 566 567 568 569 570 571 572 573 574 575 576 577 578 579 580 581 582 583 584 585 586 587 588 589 590 591 592 593 594 595 596 597 598 599 600 601 602 603 604 605 606 607 608 609 610 611 612 613 614 615 616 617 618 619 620 621 622 623 624 625 626 627 628 629 630 631 632 633 634 635 636 637 638 639 640 641 642 643 644 645 646 647 648 649 650 651 652 653 654 655 656 657 658 659 660 661 662 663 664 665 666 667 668 669 670 671 672 673 674 675 676 677 678 679 680 681 682 683 684 685 686 687 688 689 690 691 692 693 694 695 696 697 698 699 700 701 702 703 704 705 706 707 708 709 710 711 712 713 714 715 716 717 718 719 720 721 722 723 724 725 726 727 728 729 730 731 732 733 734 735 736 737 738 739 740 741 742 743 744 745 746 747 748 749 750 751 752 753 754 755 756 757 758 759 760 761 762 763 764 765 766 767 768 769 770 771 772 773 774 775 776 777 778 779 780 781 782 783 784 785 786 787 788 789 790 791 792 793 794 795 796 797 798 799 800 801 802 803 804 805 806 807 808 809 810 811 812 813 814 815 816 817 818 819 820 821 822 823 824 825 826 827 828 829 830 831 832 833 834 835 836 837 838 839 840 841 842 843 844 845 846 847 848 849 850 851 852 853 854 855 856 857 858 859 860 861 862 863 864 865 866 867 868 869 870 871 872 873 874 875 876 877 878 879 880 881 882 883 884 885 886 887 888 889 890 891 892 893 894 895 896 897 898 899 900 901 902 903 904 905 906 907 908 909 910 911 912 913 914 915 916 917 918 919 920 921 922 923 924 925 926 927 928 929 930 931 932 933 934 935 936 937 938 939 940 941 942 943 944 945 946 947 948 949 950 951 952 953 954 955 956 957 958 959 960 961 962 963 964 965 966 967 968 969 970 971 972 973 974 975 976 977 978 979 980 981 982 983 984 985 986 987 988 989 990 991 992 993 994 995 996 997 998 999 1000 1001 1002 1003 1004 1005 1006 1007 1008 1009 1010 1011 1012 1013 1014 1015 1016 1017 1018 1019 1020 1021 1022 1023 1024 1025 1026 1027 1028 1029 1030 1031 1032 1033 1034 1035 1036 1037 1038 1039 1040 1

1. The first part of the document is a list of names and their corresponding dates. The names are: "John Doe", "Jane Smith", "Bob Johnson", "Alice Brown", "Charlie White", "David Green", "Eve Black", "Frank Gray", "Grace Pink", "Henry Blue", "Ivy Yellow", "Jack Purple", "Karen Red", "Leo Orange", "Mia Silver", "Noah Gold", "Olivia Bronze", "Pete Copper", "Quinn Iron", "Rory Steel", "Sam Tin", "Tina Lead", "Uma Zinc", "Victor Nickel", "Wendy Platinum", "Xavier Silver", "Yara Gold", "Zoe Bronze". The dates are: "1990-01-01", "1990-02-01", "1990-03-01", "1990-04-01", "1990-05-01", "1990-06-01", "1990-07-01", "1990-08-01", "1990-09-01", "1990-10-01", "1990-11-01", "1990-12-01", "1991-01-01", "1991-02-01", "1991-03-01", "1991-04-01", "1991-05-01", "1991-06-01", "1991-07-01", "1991-08-01", "1991-09-01", "1991-10-01", "1991-11-01", "1991-12-01", "1992-01-01", "1992-02-01", "1992-03-01", "1992-04-01", "1992-05-01", "1992-06-01", "1992-07-01", "1992-08-01", "1992-09-01", "1992-10-01", "1992-11-01", "1992-12-01".

10-10-68

11. The following information was obtained from the records of the
Department of the Interior, Bureau of Land Management, regarding the
land owned by the United States in the State of California:

प्रीति नमाङ् देवगणो करणो सत्र सदा ।
 परपत्नीं यत् परप्रियो धोषी उमर नह ॥ १॥
 मैं परपत्नी परप्रियो तोरण-री तणिया ।
 पर-यत्न छांकी पैरतां पैरै यत्न जमिया ॥ २॥
 मैं परपत्नी परप्रियो बागां मांह मनाह ।
 छायो साय दिखायकर धोषी उमर नह ॥ ३॥
 मैं परपत्नी परप्रियो सुरत पाठ सनाह ।
 थक लकसी, गुकसी गर्वै मीठ पकेसी नाह ॥ ४॥
 मैं परपत्नी परप्रियो मूर्खां मित्रियो मोह ।
 जासी मुर्ग न धोखो जासी बह संजोह ॥ ५॥

२. घर की परीक्षा यहू ने विवाह होने के समय ही कर ली ।
 घर-घर झुकाकर देखनेवाला (जलानशील) और लज्जुओं को निजबल
 वाला है और वह कोई उल्लंघन किए बिना जाता है ।

३. मैंने विवाह के समय तोरण की लकियों पर ही अपने पति के
 परीक्षा कर ली कि यदि उसकी करवाही कभी बाहों की लकियां पहनेगी ।
 जैसी लकियां और भी बहुत-सी हैं जिन पर पहनेगी (यदि करवाही बिना
 होनी तो बैरियों की लकियों जिन भी बिना हुने बिना रहनी—यह लकियों
 बैरियों को मारकर मरेगा) ।

४. मैंने विवाह के समय देखा कि पति ने घर-बैठ के नीचे कमर
 पहन रखा है । सभी मैंने परीक्षा कर ली कि वह अपने छात्र बोली उल्लंघन
 किए बिना जाता है ।

५. विवाह के समय ही पतिबल धारण और कमर को देखकर मैंने
 पति की परीक्षा कर ली कि मुझ में उसका यह लकियां हरनी गिरने पर वह
 लकियां ले गिरेंगे ।

६. मैंने विवाह के समय देखा कि मोर्छे मीर को सुरही है । सभी
 मैंने परीक्षा कर ली कि वह अपने स्वयं नहीं जायगा, सेवा बोध कर जायेगा
 (लकियों को मारकर मरेगा) ।

મેં સર્વંત્રી વરિયા માદ મદે વજ માદ ।
 હો ન રાગ્યેં એવલાં વરલાં જાણ વહાંમા
 મેં વાવનાં વરિયા માજન માથે કમ ।
 માજને વજ માણનાં વરિયા રાં વહાંમા
 વજ તુલાં પોરનું વરનાં વર માંગ ।
 વજ માજનાં વરિયા વજ વજ તુલાંમા
 વજ જાણ માજ તુલાં વરનાં પોર ।
 વજ માજ જોડાં વરનાં માટે વરનાં વર માંગ ।
 માજ ! માજ વરનાં વરનાં વરનાં વરનાં ।
 વજ માજ વરનાં વરનાં વરનાં વરનાં ।
 વજ માજ વરનાં વરનાં વરનાં વરનાં ।
 વજ માજ વરનાં વરનાં વરનાં વરનાં ।
 વજ માજ વરનાં વરનાં વરનાં વરનાં ।

सखी ! हमीजै ऊँठ-री बरसां जाग आई ।
 पर-बख्श ऊमां नह पड़े, पर-बख्श जीव पड़े ॥११॥
 नाह न थायी मीढ़-में ओड़ी ठाढ़ अंगूठ ।
 सो सजनी ! किम बूझसी पर-बख्श मिदियां पूठ ॥१२॥
 घर घाड़ो, पिय अपपण्यो, पैरी-बाई नास ।
 मित-रा बानै डोछवा पद चुड़ही-री आस ? ॥१३॥
 पैरी-बाई नासवा, सदा खणायकै जाग ।
 हेखी ! कै दिन पावणो जूवा, भाग, मुहाग ? ॥१४॥
 घर-घर बैर विसापिया दिन-दिन छू बै पाव ।
 हेखी ! मो भव हेख्यो, जई न धाम किवाव ॥१५॥
 सखी ! सरोसो नाह-रो सुनो सखनम जाव ।
 पूछ सुगंधी पौष पर आसी अंगूर-कडाव ॥१६॥

११ हे सखी ! मेरे पति की एकबार आकाश में बबरी है ।

सखु-सेवा के करे रहते नहीं गिरेया सखु-सेवा को अतिथर गिरेया ।

१२ हे सखी ! पति बीड़ में भी अंगूठों की अपह बड़ी नहीं जाय
 वह सखु-सेवा से निकले घर पीठ कैसे देगा ?

१३ घर में बीड़ा है पति स्थिर नहीं रहने वाला है बैरियों ।
 मुहल्ले में निवास है अदा-अदा डोछ नकले हैं । जूबियों की (मुहाग की)
 आशा कम तक ? (पति के अचिक दिन जीव की संभारना नहीं) ।

१४ सखियों के मुहल्ले में निवास है अदा एकबार अपभट्टी है
 हे सखी ! जूवा आग्य और मुहाग कितने दिन के अहमाव ? (अचिक दिन
 रहनेवाले नहीं) ।

१५ घर-घर से बैर बसा रखा है, दिन दिन पावे मारा है ।
 हे सखी ! मेरा पति जकेका है फिर भी घर के बरवाले बंद नहीं करता ।

१६ हे सखी ! घर को सुना मठ समझ, सुखे पति का मरोया है,
 उबवा हुआ सखु सेवा घर जैसे आगवा कैसे पूछ को सुगंधि घर भीता
 जाय है ।

घोड़ा हीस न मस्तिषा पितृ ! नीरवो निवारि ।
 पैरी व्याघ्र पाशुषा बल्ल-वैम ! सुम्ह दुषारि ॥२४॥
 छठ अश्व-बोससा ! मार परवै मर !
 घोड़ा पाकर घमघमी सीरू रग दुषार ॥२५॥
 छठ बबंगा-पोखणा ! बामय आसै कंठ !
 बौ हत्था रो ऊरै दुषम-कमल दुषुठ ॥२६॥
 पण आसै, आगो घसी ! दुषम-कमल हथार ।
 पिय मृता रा पापुणा मिथय दुषावै बार ॥२७॥
 पंथ मिहारै पाशुषा गीध मिहारै नैय ।
 अमल कपोल कम्हळी नीर निवारो नैय ॥ २८ ॥

२४ हे मिथ ! घोड़ों की यह विचित्रावृत्त घसी नहीं नीर को दूर करो । हे व्याघ्र के स्तंभ ! कहु तुम्हारे द्वार पर बल्लमात्र होकर जा पहुँचे है ।

२५ हे अश्व बोक बोकवेवाले ! बन्दे । हे बाम ! तुम्हारी पत्नी कहती है कि घोड़ों की पाकर बल्ल बन्दे है नीर मिथ रग घावा जाने लगा है ।

२६ हे बबंगे (बिबन्ग) बोक बोकवेवाले ! बन्दे । हे पति ! तुम्हारी पत्नी कहती है कि यह बबंगा तुम्हारे ऊपर है अथ यहरा क्येवाहक हो रहा है ।

२७ पत्नी कहती है कि हे पति ! आगी । हथार अथार का कोलाहल हो रहा है । मिथ आरिषे हुने बबन्गल (कहु) बाहर मिथवे को दुष्ठा रहे हैं ।

२८, बबन्गल (कहु) तुम्हारा मार्ग देख रहे हैं, पीध आकल को देख रहे हैं कपोलों में घपीय बबल रहा है, बाकों के नीर को दूर करो ।

पोढ़ी हीस स मस्त्रिय
 वैरी आया पावुआ दख
 छठ अचूक-बोझणा !
 पोढ़ी पाय्दर समधमी
 छठ अचूक-बोझणा !
 भै हस्ता तो ऊमरै
 बय आसै, आगो पखी
 बिछ नृता-य पावुआ
 पन भिहारै पावुआ
 अमल कचोअो ऊमरै

१० हे भिय ! ओहो की च
 क्यो । हे खेना के लर्म ! कहु त

१२ हे अचूक बोझ
 कइली हे कि ओहो की च
 जमा है ।

१३ हे वेहरी (
 क्यो कइली हे कि
 हो रहा है ।

१४, पखी
 दख हो रहा है ।
 रहे हैं ।

१५, म
 दख रहे हैं, क

हे अचूक
 बोझणा !
 हे अचूक
 बोझणा !
 हे अचूक
 बोझणा !
 हे अचूक
 बोझणा !

ईस ! धन्य जे आसता, तो क्षीजै सिर तोड़ ।
 सब जेवण धन-रो धनी पड़सी बैर बड़ोड़ ॥४४॥
 सखी ! तुम्हींया कत नै घेरया धन्य जणाई ।
 सिर मोरां, मुख मंगणां बैरी बहुत बर्माई ॥४५॥
 बित मोरां कत मंगणां बैरी जाग-भरमाई ।
 सारां-नै कृपापूसी जे कमो कुसर्माई ॥४६॥
 मूढ जर्बानो हं सखी ! कंत बरानू कीस ।
 बित मानै बाहै दुखां आंख हियै को सीस ॥४७॥
 और बहै गह आपरां नीसरणी-बल नीठ ।
 जलको धन पूगो बढे, मांरुद मेल्हे पीठ ॥४८॥

४४ है सखर ! यदि बहुत जरूरी है तो मझे ही सिर बटारकर ले लीजिये । इस धन्यका का पति मझे सब से ही बैर का बड़का से सेया बैर बन गिरेया ।

४५ है सखी ! तुम्हारे पति को बहुत से लोगों ने घेर लिया है— सिर को महाजनों के मुख को बापलों के और बैरियों के चारों ओर से ।

४६ मिरा पति यदि कुसलता-पूर्वक रहा तो महाजनों को धन बापलों को शान और शत्रुओं को अहम की बगलार्थें देकर सबको खुश होगा ।

४७ है सखी ! मुझे क्या भयानक हो रहा है । पति का बखान किस प्रकार करे ? वह बिना सिर के ही (सिर करकर फिर जाने पर भी) शत्रुओं को ईना को काट रहा है । वह आपको देखता कैसे दे ? आँखें उलझ डूबन में हैं या सिर में ?

४८ हमारे कोय किसी पर बढेको है, हमारे से और बड़ी कमिया ८ बाप बहुत पाई है । परन्तु मेरी पराजय पति मझे पर पड़न ही न पया । जेसा करवे में उधारे बगदर को भी न दिये रख दिया ।

देखी ! पीयर देखियो, ओकण एठ मुहाग !
 पर आयां धण जाणियो बुझावूण हुहाग ॥५४॥
 पीरपियां सुतो धणो कुल्लै थरुनी ! काय !
 देखीजै मुल शीह-रै मुल हो आम सवाप ॥५५॥
 पोर बवधुनै पौडियो गिणतो फीज गरीब !
 दोप बही तक बीम-नू बैरी आय मकीब ॥५६॥

११ वीर पत्नी

मठयाल्य धूमै लकी बाण्य लह गिरफ्तार ।
 बाण्य सली ! सो ह गयो मिय मर वषव कहाव ॥१॥
 नह पड़ोस कबर नरा हेथो ! बास मुहाव ।
 बलिहारी कण देसई माथा मोल बिकान ॥२॥

११ हे लकी ! पीहर में ही एक रात मुहाग देखा बा इस कर
 जाने पर छ मिया के कसरोतर हुहाग ही देखा ।

१२ हे वरुनी ! रात भर पीड़ा से व्यथित रहने के बाद प्रमाद के
 भ्रमन मेरा पति कुछ आत्मपस्त हुआ ही रहा है । तू क्यों रो रो कर सौर कर
 रही है ! प्रमाद के दो पहरों को खोबकर क्या मैं कभी बेम जाती हूँ !

१३ कछु सेना को बीच देखकर कहीं राजि के पीछे बहर हो पाया ।
 छो बैरी मकीब ! ही कही भर सो मित्र को पाराम है (वह प्रहर्षार्थ बजाना
 बन्द कर) ।

वीर पत्नी

१ मित्र दुर्ग में मठवाले वीर नहीं धूमते और बाण्य वीर नहीं
 कराहते, हे लकी ! उध दुग को जहा है मित्रके वीर बिचारे कहे जाते है ।

२ हे लकी ! कबर पुरुषों के पड़ोस में रहना अच्छा नहीं लगता ।
 मैं उध देख पर बलिहारी हूँ जहाँ मिर मोल बिकने है (जहाँ
 पितों का बेम-देम होता है) ।

क्या ! रख-में पैसतां तू मल प्यपर होब ।
 तूम्ह छाव, मुम्ह मेहणो मलो न पायी कोब ॥१८॥
 सूर ! रख-में जायकर छोहा करो निस्तक ।
 ना मुम्ह चहे रंजापणो ना तुम्ह चहे कम्हक ॥१९॥
 भाय्म मल तू कंभर ! तो भाय्मे मुम्ह लोह ।
 मेरी संग-सहेछियां लायी है मुख मोह ॥२०॥
 कंभ ! पराब गोरयें भाजै साव गंधार ।
 संखस छागै दुहु दुम्ह मरखो पौम्ह बार ॥२१॥
 कंभ ! सलोपै समय कुम्ह, माह पिरनी छांह ।
 मुदियां मिळसी गीरयो मिळै न पछ-री बांह ॥२२॥

८ हे वरि ! तुम्ह में ऊँचे समय तुम कल्प न हो जना । तुममें
 कल्प मोल्मी पड़ेगी, तुम्हें लाने तुमने पड़ेगे, कोई भी छप्पा नहीं करेगा ।

९ हे वीर ! तुम्ह में अकर निरलक होकर हथियार बख्ताबी जिनसे
 न तुम्ह विधवापन माह हो और न तुम्हें कर्मक ।

१० हे वरि ! तुम तुम्ह में भागना मल । तुम्हारे मात्मे से तुम्हें
 कर्मक लसेगा । मेरी छाव की लक्ष्मी तुम्हें छिटा-छिटा लक्ष्मी बखर्सेगी
 (मेरी हँसी उधारेगी) ।

११ वरि ! परायी मुद्गभूमि में जो भाग्य है वह गंधार है । इससे
 (मातृ-कुल और पितृ-कुल) दोनों कुलों को कर्मक लग्य है । मरना
 जानिकर भल ही बार होता है ।

१२ हे वरि ! दोनों कुलों (को लक्ष्मी) को धोर देखना । जीवन
 जे चिरकी चिरकी जाया है उसको धोर मत देखना । यदि औरकर या मने
 जो बोले समय फिर रखने के लिये तुम्हें लक्ष्मी हो लियेगा, तुम्हारी
 लक्ष्मी को बाँह नहीं लियेगी ।

'तु गाय सब गद-गद, यणी भवामक आय ।
 द्विपु-गयी सिपणी भीषी तेग च्छाय ॥१३॥
 यदां चरगा सीगिय भाभी । फिसई धम ।
 रव सुखीने पारका खीजे हाथ अगाम ॥१४॥
 भाभी । हुं बावघां मदी भीषां यदक-रुह ।
 न मनपाउ यपुतां मदी भयल चदक ॥१५॥
 यपी पर-नल मोव ने दम सगो । मजमकन ।
 भाभी बहा नुमन पर, नीने पर मजमकन ॥१६॥
 भाग्य रन सुधक धन न नग आवी भाद ।
 पारधी-वा पुनरु जानी गाय दिवाइ ॥१७॥

१३ वा के मत काम गद (कानि जाव) में चक गये । पीछे न
 पयक कचको के कावमक न दिका । वह देवक विद्वती की वही सिद्धि
 निजम को दया दिका ।

१४ हे जाकी पाद वा चरगा किम किपु बावला भा । कचकी का
 भागी पुनरु वह दहा है । अगाम दम न को । कदमे को कभार हो
 गया ।

१५ हे जाकी मे हाथ को कचगा मिक दम पर चरगा हुं का
 मजमकन काकी वा न कचमको की मजमकनको कावम (कचको के
 मजमकन दिवदुव)

१६ हे मको देवकी न को न न । न कचमको मिक दवा है ।
 कोर है कचम दम के कोर पर चरगा है कोर मजमकन दम के कोर पर ।

१७ चरक (चरगा के) काव के कचम कोर न । न मजमकन
 के दम कोर न दिका दिका कोर कोर के कचम दम पर न कोर
 कचम के दम कचम कावमको न कचकी का कचम मिक कोर दिवदुव

धन विधमा ! तो लेखायी धन तो हाथ पिसेछ ?
 परख खिययो मरु पोण-सू मरख खिययो दित बेस ॥१८॥
 बरु जलाछे हेरु पल्ल बीजै परा भविष्यर !
 बलि विहु पल्ल ज्वाभिया बरु-सुखी बलिहार ॥१९॥
 हे सिपखियां आज छः, निरबीजा घर मांघ ।
 बंस-जगज्जक पाणुकी मिछै मूषा मांघ ॥२०॥
 जे मूषा तो अस भला जे बरुछा तां सभ ।
 विहु प्रकारां हं सपरी !, मादक घुमै बार ॥२१॥
 रण रहिय्य न रोह, रोह छ रण छडे गया ।
 हज घर पाही रीठ है, मरणो मंगल होह ॥२२॥

१८. हे विधाता ! तेरी कलम जन्म है तेरा हाथ विरोध रूप से प
 है जो दुने मेरे जन्म में बीर पति के साथ विवाद होना दिखा और एक
 दिने मरना दिखा ।

१९. यह जेक वरु को तकायित करना है वृद्धों को संभेदा ही रण
 हं । मैं जगज्जुकी (बीर नारी) पर बलिहारी हूँ जिसके पितृवज्ज
 रवसुरपण दोनों को उज्ज्वल बनाया ।

२०. सिपखियां (बीरांगनायें) आज तक भी हैं दुष्पी उनके की
 छ रहित नहीं हो गयी है । बंस को उज्ज्वल करनेवालों बीर-पक्षी
 साधारण औपनिष में निधायी हैं ।

२१. पति यदि आने लगे को बहुत जल्दा और यदि वरु गये छ
 लयस घण्टा । हे सपरी ! दोनों ही प्रकार के द्वार पर आज बज्रों
 (मंगलोल्लास होके) ।

२२. युद्ध में आने लगे दुष्टों को मर रो, कबको रो जो युद्ध बोधकर
 भय लगे । हज घर में जो वही रीति है कि मरना अवल लयस मंगल है ।

दिन मरिछो, दिन मीठियां जो पयु आयै धाम ।
 जन्म पक्षो पावद्र तो रामच-री जाम ॥२३॥
 कन । छात्र न मोह पग अल सुजीने जग ।
 पात आने वा घणो, ता पण हीने रंग ॥२४॥
 इ पात्र आग दुये आणी नाह परेह ।
 य पावो पय जीयुं दुं आग बुझ परेह ॥२५॥
 मीर पुये धावणी परे भूखन केर ।
 हसिदय भावो हेमी नवह केने नाहरे ॥ २६॥
 उ मल भयण ता मन्वो । भातादक सत्र धाक ।
 नित्र भयण ता नाह-या धाव न मृत्यो रात्र ॥ २७॥

११. नि विना बाध दिव वा विना विमल वाये यदि घर आरमा
 जन्म वा पुनिरी को नाह वा । जा बीमा कक कनी मे वार
 होतु ।

१२. हे वादक । छात्र पीरो मे महरो मव धमा कक पुद्र मुनी
 वा । यदि केन ककि कववात को पाव पर वात्र जल (पयवात वा
 मीर) वा फिर भुव महरो दयमा ।

१३. मे कने कोर कव कोले—इक क ता दामन ककि मुक पावे
 पय वा । यदि मे व को वायो क प्यारी हु वा पय को पयव मुक
 के कव (मुके कको रोके वा कववा देवे) ।

१४. हेर मे कने वा जीव हे मे कव को मर को पीरो क क
 । पीरो । पीरो मे कव के जल ककि कक इक क कोर हेर पयो
 दि कवाय कको इके के किक ककि कक को कवा कवे वाक कको पी) ।

१५. हे कनी क इ कक कक कही हे को किक को कक कक कवे क
 । क ककि को क क को कक, कक ककि कक कक कक कक कक कक कक
 दि क कक वा कक कक कक (मे किक ककि कक कक ककी कक कक, कक
 कक को कक कक कक— कक ककी कक को कक कक कक)

१० ! भेक संसरो वाचन नै परिया ।
 यथे पात्र न पत्रिया टामक टस्टहिया ॥१॥
 छे गुन पाक गुननै बटीय गुण राय ।
 रागुता पकी पकी पत्रिया आग हाय ॥२॥
 परिया ही भय आगन रे निह ममापी लेत ।
 मोन बटी आगन निह, धन बटी भय दल ॥३॥

१२ - पोर माता

दया न दयो आगयो त्य सता भिह माय ।
 पुन भितायी पकने माय-महाई माय ॥१॥
 मुन भिया दित दम रे दारया बंधु-भार्या ।
 मा मा दारयी जयम द जितरी दारयो आन ॥२॥

११ हे पति ! जब मरेगा मा दित को कदवा—मा आन के
 भय माता बही बही मा वा आन मा जित हाथ बज रहे है ।
 १२ बेटे के हा गुनो को देखकर मे दम पर मेकनो गुनो का
 प्येदाया का है । विहाद के कदम पर वा के न है दरो पर आन के कदम
 पने पक रही है

१३ निह कोय माये के काद को कदम मे दारकर भन दित भन
 है, वा है। न के को कदम मे मा दैरो । कदम है दारकर न कदम !
 निहको—निह कोय न के पर आन के बही कदम, माये माये है ।

१२ की २७

१ कदमो पति को ही दारकर दारकर निह कोय—दम
 कदम कदम पति मे ही दार को माये का कदम निहको है ।
 २ कदम दार के निह कोय कदम । कदम कदम कदम दार को दम ।
 कदम के कदम दार कदमो दारको दारो दारो निहको दारकर न के दारो ।

सुत ! करजे हित वेस रो मरजे लागी-हूँ !
 बूढ़ापा-री चाकरी कर भर पाई पूत ! ॥१॥
 लखम बिलायो लखम-बिन, परण बिलायो आम ।
 बेटा ! हरण बिलावजे मरण वेस-रै कम ॥२॥
 आम मरे सासू ! कहे, हरण अचानक काह ।
 बहु बछेबा हुकसे पूत मरवा काम ॥३॥
 सुन मरियो सुत ओकसो सासू प्रभजे पार ।
 सो बखियो कायर बयो बेटी ! लखम निहार ॥४॥
 सासू आये तेइवी की मनिहारी कम ?
 सुन मरोखो पूत-रो बूढ़ा-रो जम-राम ॥५॥

१. हे पुत्र ! देख का हित करना, लखमारी से कछर पिर जाय ।
 बेटा ! लता करोमे लमी में बुझाये की सेवा भर बाईनी (लमी समझी की कि
 तुमने बुझाये में मेरी सेवा को) ।

२ हे बेटा ! लख लेख तुमने लखमिजन का दिन दिखाया । दिवस
 करके लाख बिबाहोपपन्न का दिन दिखाया । हे पुत्र ! देख के लिये मरण
 मरवात्पन्न का दिन भी दिखाया ।

३ हे सासू ! कबना काम कर में अचानक काहे का हर्ष है ? लख
 उत्तर देती है कि मेरी बुझवपू काम लती होने की उलझिज ही रही है और
 पुत्र मरने की जा रहा है ।

४ पुत्र बछेबा ही मरा (बछुओं की मार कर नहीं मरा) वह बात
 सुनकर सात बुझवपू से कहती है—मेरा बेटा कबल हुआ, हे बेटी ! उसके
 साथ लती होना रोक दे (लती होने का विचार छोड़ दे) ।

५ लाख बुझवपू से कहती है—मनिहारीव (मुनिहारीव) को किस
 बिबि बुझाया है ? मुझे अपने भेटे का मरोखा है कि वह पूरिनों का बमराज है
 (मरा जायगा और तुम पूरिनी नहीं रहने देना) ।

मुन पारा रज-रज धियो बहू बल्लेषा जाय ।
 बनिषां डंगर साज-रा सासू-पर न समाय ॥१८॥
 हूं बप्रिहारी राखियां जिण जाया रजपूत ।
 भय-हूँतो हूँसी करै सै बाता-रा सूत ॥१९॥
 हूं बप्रिहारी राखिया जाया बंस कटीस ।
 सर ससूया बून छे सीस करै बगसीस ॥२०॥
 हूं बप्रिहारी राखियां, यास बजायै बीह ।
 बीर जमी-रा ज जयै मांछ-हीठा सीह ॥२१॥

१३—वीर बालक

रज सखी रजपूत-री बीर न भूले बाळ ।
 बाहू बरसा बाप-रा छड़े पैर छंझळ ॥२२॥

२. बेरा छल्लार की पार से कलक कल कल हो गया और बहू मती
 में आ रही है । वह ऐलकर माय के दरज में छाया क पहाड़ उठते है
 ये उममें मना नहीं रहे है (मतो होने का कारण मुझे नहीं मिला वह ज्ञान
 से ज्ञान जलजल छल्लिह होतो है) ।

१. मैं ब्रह्मविषों पर बलिहारी हूँ जिनमे भीम बीरों को ज्ञान दिया
 जो जर्ममर को ज्ञान करे है और मर जाती को पुकारते है ।

१. मैं ब्रह्मविषों पर बलिहारी हूँ जिनमे ब्रह्मों के ब्रह्म बंधों
 को ज्ञान दिया जो मरक-मरिह छेर भर जाता छेर बरके में मिर दे
 देते है ।

११. बाळ बजाये क दिन (पुत्र ज्ञान के दिन) मैं ब्रह्मविषों पर
 बलिहारी हूँ जो मांछ को पहाड़ न करने बाळ बिरों के मर्य भूमि के
 ब्रह्मविषों को ज्ञान देतो है ।

१४ वीर वनूक

१. मुद ब्रह्मों की जती (वरज्याय) है—इस बाळ को बीर
 बाळक छेला हुआ जो बही ब्रह्म । बिह के बजाए बाळ बीर बजाए बाळों
 को कलका में हो जिन के वर का बरका पुत्र बरका है ।

भास वर्णता हूँ सखी ! दीठो मैं पुझाव ।
 पाया-रै छिर चेतनो भूयां कोण सिताय ॥ ॥
 और मुखा मुख मोहकै परता पाँच बिचास ।
 भर-मै मायह पातियो बटकै पूजा बाछ ॥ ॥
 'हुझ धारो रण-पोहणू मो-नू कहती माव ।
 मायां गाहक पैलियां कजियो बरजै कस ? ॥ ॥
 मम सोचे जाये मठी मोनू बाछक माव ।
 पैर पराया बावकै, जठै म पर-रा जाव ॥ ॥
 बाप गयो छे मावरो झक्ये जात कह ब ।
 तोव मचाबी कीकरी पैरयां-रै पर बूब ॥ ॥

१ हे सखी ! भास बचने पर बचता बचक के रूप पुझाकर देता ।
 बाजी की आवाज सुनते ही सत्यवान हो जाता और को गर्म में ही रोव
 सिखा देता है ?

२ कुछ में घर के दूसरे भव कोयी की मरा सुनकर माता के बास
 को, जो पाँच वर्षों के बीच में का रोका पीर बढ़ कर दिया । जब के
 इस प्रकार रोका गया देखकर वह और बासक रोव के मारे हाथी की
 कस-कस कर खम्बे लगा ।

३ हे माँ ! तुम्हारा करती की कि मेरा बंध कुछ-अजि में मोवपावा
 है । जब माता के माहकी (शत्रुघ्नी) की देखकर ए मुझे बड़बड़े के रवी
 रोक रही है ?

४ हे माता ! मुझे बासक जानकर मम में चिन्ता मत्त करवा ।
 जिस कुछ में दूसरी के पैरी का बड़का बिना माता है बचमें मचा घर के और
 का बड़का गया नहीं बिना जानका ?

५ शत्रुघ्नी के बाता बोक दिया । पिता माहेरा (भास) केकर
 और बाता कुन्म्व की बात है (देवता की मनीसी दरी करके) गया हुआ
 बा । तो भी चकके बासक के शत्रुघ्नी के घर रोवा-पीटवा मचा दिया
 (शत्रुघ्नी की मार बाता जिससे उसके घर की रिया में रोवा-पीटवा
 होवे गया) ।

भोम्य जाणे भूखिया बरकां आठां बाळ ।
 भेष बराये सिधणी कंधूर जणै सोह काळ ॥७॥
 दिन-दिन भोम्ये हीसतो सदा गरीबी सूत ।
 धडी कुंजर फाटवां जाणवियो ओठूत ॥८॥
 पडियो बाकै बाप-रै पाग वसूमळ सेत ।
 बेटो घर आयो न्ही धोळी बापण्य हेत ॥९॥

१४—घोडो

रंग नगारां आविरव् आवि घगारां अंग ।
 रंग सगंठा तांबियं ठो-नूँ रंग तुरंग ॥१॥
 बीसा ! बसिहारी बसो, हज ठापा यम-मंड ।
 पळवी पडियो टुक हुय काळ्या घणी-रै रुत ॥२॥

मोझे कुछ वह समझकर बोले मैं जा गये कि काळक घाट ही
 रंग का है । पर उनकी वह भावना नहीं पा कि हज़ार बराने में सिमनी है जो
 जो भी कुछ समझती है वही काळ के समान होता ।

य अंक का अङ्क का प्रतिनिध् भोका-भाका दिखाती पड़ता था ।
 यमक रंग सदा गरीबी-अरा पड़ता था । परन्तु कुछ में अब वह हाथियों की
 फाट-फाटकर फेंकने ज़या हज बाची है कैड के कपड़े का मोह जाता ।

१. देता कुसुमी रंग की बगली पहने बाप के बाळ ही कुछ-नूमि
 में गिरा । वह छन्द बगली बाँधने घर छोड़कर नहीं जाता (पिता के
 मरने पर देता न केव बगली बाँधता है) ।

१४ घोडो

१. हे घोडे ! कुछ के नयारी का कंधर धुनकर शरीर में ओह
 भरकर रंग सगंठा ही ए छोड़कर करने लगा । यम है तुम्हें !

२. हे घोडे ! मैं कुछ घर बसिहारी हूँ । यमुनी के मुँह को देती की
 बली के मारकर स्वामी के शरीर के कड़े रहते स्वामी के पड़े हो डूबने
 डूबने होकर मिरा ।

झीन्सा ! तू पूछू तनै, कीय खुतायूँ काय ?
पासा कंधूम्य पाप्मियो पकतो मोम पुगाव ॥१॥

१५—नीम

बैर ! रखीजै राज-घर पायै केन गरीब !
हेली ! रूप-वपाहिओ म्हाँरै नीम लबीव ॥१॥
हेली ! तिस-तिस कंठ रै जंग बिस्रमा राग ।
तू पम्पिहारी नीबवै बीघो फेर मुहाग ॥२॥

१६—कायर

मेख छिया-सु भगत नहि होय न गहर्जा हूर ।
पोषी-सू पंडित जही सखर-सू बहि सूर ॥१॥

१ हे नीम बोले ! मे तुम्हें पूछता हूँ—तू के इतनी शीघ्रता किम
छिने की । प्यारे माखो मे तुम्हें बाका बा, तुम्हें (स्वर्ग) बहुबाकर फिर
पिरवा ।

१५ नीम

१ बैर राजा के घर रहै गरीब लोग जन्हें कहाँ पावै ? इ सही !
हमारे को रूप से गूठ किया हुआ नीम ही बैर है ।

२ हे सखी ! पति के सरीर में तिस तिस (जंग) में कबहार के
बाव करो । ये नीम पर बलिहारी जाती हूँ जिसने मुझे फिर मुहाग दिया
(मेरे मुहाग को खीरा दिया) ।

१६ कायर

१ भक्त का बैर घबनाये से कोई भक्त नहीं हो जाय। पहले पहनने से
कोई चप्परा (मुन्वरी) नहीं हो जाय। पापी से कोई पंडित नहीं हो जाय,
हैल ही इतिहास से केने से कोई बीर नहीं बन जाय ।

अंशु ससै कु-वस्त्रिणां भागज तजो सभाय ।
 निगुणा बिर रोपै नही पाव पही ही पाव ॥२॥
 कारण सरे ॥ कोय, यम प्राक्रम हिम्मत बिना ।
 इन्द्रारणा की होय रंग्या सिग्याय राबिया ॥३॥
 नर कायर आणै नही खूज सिहाज अगार ।
 पोछै दिन जोड़े बणी बणी मिछै कज बार ॥४॥
 कांछन ससै कु-वेस्त्रिणां मत दे संग महमाय !
 निबारा आणै निमल-म हार-मोर हो जाय ॥५॥
 कंय ! न राखो कटक-में नर कायर मिराज—
 कस्य बज्जरा काटने कांछन बीषण कज ॥६॥
 कंय ! सुगवै क्यू करो, कायर नाबू कज ।
 रहै न कायर राज-में रहै जिहां घर राज ॥७॥

२ कायर साधियों का बुद्ध के समक्ष में सामने का स्वागत होता है ।

उन्हीं से हीच जैसे जबकि बुद्ध में चौबार्ह बही भी वेरों को स्वर करके नहीं बमाले ।

३ वह पराक्रम और हिम्मत के बिना कोहू काम नहीं बमाले । ऐसे हुए सिवारी को (बीर का केह बारण जिये हुए कसरी की) प्रोत्साहित करने से क्या होता है ?

४ कायर मनुज बमक के सिहाज की लम्बि भी नहीं मानते । जब छेबार्ह सामने-सामने मिचली है उस घमन के पीछे जिय (जिय बढ़ावे) स्वामी को जोष देते हैं ।

५ हे महामाया (बचवती) ! बुद्ध के समक्ष कायर साधियों का संग मत देना । हे धर्मों के देखने देखने कज भर में घटरण हो गले हैं ।

६ हे पति ! अपनी सेवा में कसबा-हीच कायर पुष्टियों को मत रखना बुद्ध को बीछना हो बी उन्हें कसै बेहो पर कसकर निमल देना ।

७ हे पति ! तुम्हें जल्दा कथ बेछा करो, पर कायर कभी काम नहीं बमाले । जियके राज में कायर नहीं रहते, उन्हीं के घर राज रहता है ।

समर सिमा-सुमा गमिषां-त गह्वरि फिरे ।
 अहवा ठो अमराव रोट्यां मूषा, रात्रिमा ! ॥८॥
 माया सै है ठाकरा ! कबज कठै कुण केव ।
 कायर घर माया दियै सुर दियै रण-अंत ॥९॥
 मरै सराव, पण ठाकरा ! मरयै मर नहोत ।
 सुरा रण-अंत मरै मांयै कायर-मोत ॥१०॥
 स्यामर चारै सींग-रो, भागवत रक्षा सम्राट् ।
 सींग-विहृजा सीपता पालै मैगळ पाव ॥११॥
 कायर झूठो जीवणो ज्ययै मन बरणो ।
 सुरां सानो जीवणो जे जायै मरणो ॥१२॥

कायर-निष्ठा

कायर-करै मांस-कू गिराव कव न्या खाहि ।
 कहा कु-पावन मुक्त करै हम भी दुर्गति खाहि ॥१३॥

८. जो मुह में गोहव का-का स्वभाव रखते हैं, वर गाछियों में घोर दुष्मे फिरते हैं जैसे सरपट है रात्रिमा !, रोत्रियों के बरछे भी यहमे है ।

९. हे अकुर साहब ! फिर अभी देखि है (मरते अभी हैं) वर कोई कहीं घोर कोई कहीं । कायर वर में फिर देत हैं घोर दुरवीर बुद्धभूमि में बैठे हैं ।

१०. हे अकुर साहब ! सभी मरते हैं परन्तु मरने-मरने में बहुत अंतर है, दुरवीर बुद्ध-भूमि में मरते हैं और कायर की जीत लाभ वर होती है ।

११. सांभर (बादसिमा) बादह सींगी बाबर होमा है ता भी उल्लस स्वभाव धामने का होता है । उभर सिंह बिना सीपों का होता है फिर भी हाथियों को घायक करता है ।

१२. कायर का जीवण भूख है का केवल करना जानता है (रात्रिदिन खाता रहता है) । लज्जा जीवन बीरों का है जो मरना जानते हैं ।

१३. कायर के मांस को गीव भी नहीं लाते । वे सोचते हैं—किन्हीं जिन्हे मुह को जलविष करें लाकर हम भी दुर्गति को प्राप्त होने ।

बोई पत्तर, बिरह गत स्याम ज रुम्हा म्याह ।
 बिरह नर केरो मांसदो कूकर-काग न खाह ॥१४॥
 बोई पत्तर बिरह गत, स्याम ज रुम्हो म्याह ।
 कदा तास करंजो प्रीम्या मांस न खाह ॥१५॥

कपूर-फटकर

मांम ! की कर भागियो अंत न प्युई कैस ।
 बीबी बीठा कुल-बहु मीचा करसी जैव ॥१६॥

माता-री फटकर

पूत ! पयो तुल माबिया बप-जोबुस बस पाय ।
 ओम न जायी आवसी नामय-वृष लखाय ॥१७॥

१४ जिसके बोई पर पत्तर और लरीर पर बिरह-कपूर होने पर भी
 किसी कबुली से बिर जाता है उस मनुष्य के मांस को कुछ और बीबी भी
 हैं करते ।

१५ जिसके बोई पर पत्तर और लरीर पर कपूर होने पर भी
 किसी कबुली से बिर जाता है उसके कपड़े जलिनवाह के मांस को बीबी भी
 नहीं जाती ।

१६ हे बीबी ! जिस तर से आगे हो ? क्या मांस तर पर नहीं
 जायगी ? तुम्हारी कुलीन बपू को, दूधरी लिबों को देखते तर मांसों बीबी
 करनी चर्चो ।

१७ हे पुत ! मैंने लरीर का मांस करके खाया दूध रिकामा था
 और तुम्हें खाया था । वह नहीं जाना था कि माता के दूध को खाकर
 क्या आगेले ।

पत्नी-री फटकार

कंठ ! परे किम आबिया तेगां-री बज ब्रास ।
 छहगै मूम्ह लुझीबियै बैरी-रो न बिसास ॥१८॥
 सग तो अरियां लोस भी पिब ! पर आया माब ।
 किम लंटी सग टांगवा क्या पर टांगो छान ॥१९॥
 ओ गैर्जो ओ बेस अब कीन्हे घारय कंठ !
 हुं लोमण किम काम-री, बुझा-लारन मिटव ॥२०॥
 बम् ! बीबे मम् लोपियो मो मम मरियो आज ।
 मोनू ओझै कंचुनै हाथ दिखावां छान ॥२१॥

१८. हे पति ! छलवारों के घर से उरकर घर लौटने जाते !
 कसरो से मेरे कहेंगे मैं बिप जाहने । बैरी का कोई करोसा नहीं (न-अपने
 यहाँ भी जा चहुँके) ।

१९. हे पति ! घर जान जाये । छलवार की कपुओं के झीन किया ।
 किम लुंटी पर छलवार को डोमते से अब इस घर आज को उठारकर
 डोम हो ।

२०. हे पति ! मेरा वह महना भीर वह बेस अब जाय वहन
 भीजिये । मैं तो जीवित बन चली अब जायके किम काम की ? वह पूनियो
 का लार्न भी मिरा ।

२१. हे पति ! जीवित रहकर जयम कियाइ दिया । मेरा मन आज
 मर गया । मुझे जोड़े हाथों की कपुकी में आपके हाथ दिखावे हुये (जोड़े
 हाथों की कपुकी पहनते हुआ) लजा जाती है (सचवा का बैरा पहनते हुये
 लजित होती हुं) ।

दि०—सचवा जोड़ी बाँहों की कपुकी पहनती है भीर भिजवा धँसो
 बाँहों की कपुकी ।

मझा ऊँचा माझिया ऊँचा गोम्व अधाग ।
 पन नीचा आधर पिऊ ऊँची करी न स्वाग ॥ ॥
 'बू! पत छोवी समर में बिय पत आ गत होय ।
 पत आया आँ तरपराँ छाह न बैठे छोय ॥२३॥
 समिहारी ! पा री परी अर न हथेली आव ।
 पीष नुवाँ पर आविया बिपया ऊँच वयाप ? ॥ ४॥

काव

मोनारी मूरै कही रे गहर कुम-मोय ।
 मूढ पहाई-मोयसा ! मूढ मझाई होय ॥२५॥

२१ मेरे मझो में ऊँची-ऊँची अदारीयाँ हैं और बहुत ऊँचे-ऊँचे प्यास है पर पति का आधर मोचा है क्योंकि उधरे पुढ में उधरान ऊँची नहीं की (नहीं उठावी) ।

२३ हे पति ! मुझसे कुछ में पत (पतिह्य) को दी : दिया पत के पत दया होतो है—जिसे देवी के पत (वती) को को दिया उनकी क्षमा न काहू को नहीं बैठता ।

टि०—पत शब्द में रखेच है ।

२५ हे समिहारीन ! वही का जव हल घर में न आया । मेरा पति मेरा दुखा घर आया है मैं को बिपया हो चुकी हूँ, नका बिपया के बिपे क्या गजार ? (न जव बिपया नहीं पदम सज्जी) ।

टि०—पुढ न नाम कर आता सर आने के समान है ।

२२ सुमामिन् कोठी है और कदवी है—मेरे कुछ (की पतिह्य) का मोयेबाह आधर ! तुझे मेरी मजहूरी भी हो : मेरे मेरी कमाई कोयेबाह ! हेरा मजहूरी हो । (मजहूरी = पण्य)

भुरै इम रंगरेखणो, कृपा ठाकर ! राख ।
 बसम सती धण रंगसी, पीनी आस पुढाय ॥ ६॥
 गायण कृपे, र गणन भूडा आगम मीय ।
 बसम कटायो अतर पण मूघो सेसी कोण ? ॥ ७॥

कापर पर व्यंग्य

सुरा काठा सुराय नृपां आज ठार ।
 हूँ बहिषारी कापर सदा-सुहाय मार ॥ १८॥
 मूक नाक, खिर-यो युगल ससतर साम समझ ।
 मावठ छापो समर-सू है मह छापो माह ? ॥ १९॥
 काव त्रिपै धण ! येहू हूँ भव-हुँत बिसस ।
 मैं तो विष सब हाँसिया ण्य मह लेक महेस ॥ २०॥

१८ रंगरेखण इस प्रकार रोती है—जोरे निराम्ये डकुन ! वह क्या किया ? मैं तो सोच रही थी कि सती के बसम रंगूनी पर दुःख मह जाता ही मिरा ही ।

१९ गाविय रोती है—जोरे निराम्ये ! घर कीटकर तुने मजब कर दिया । ऐसी बली मे छोटी होके के बिजे मर्हणा इत कमवाया था । उस महगे इत को जब दूसरा कोम करीवेना ?

२० बीरा का बीरण डुरा, ली नृपियों की कोना को उठार दवा है (जो निश्चय बना देता है) । मैं कानरी पर बहिषारी हूँ निषकी निषवा सदा सुहायिनी रहती हूँ ।

२१ हे पति ! तुम कुछ स भाग्यकर मौह को वाक को मिर क भुक्त को दबिवात को बीर माकिर को भी यावित हो जाये । मरना क्या नहीं काव ?

२ है मित्र ! क्या जाना देती है ? मैं बीर क कहीं बदकर हूँ । मैंने उसे मिरा मरको ईसा दिया । उस बीर मे ली केमक महापण को ही ईसाया ।

अधिक सूर ठे हूँ अधिक, बनिता । समझ बिबरु ।
 क्या मारो मो-नू हंमै ह्य-नू नारद भेक ॥२१॥
 बस । मुण पारा परम-सू साधन छाया सीस ।
 माल अवार मंगावसु पावा बीस-पचीस ॥३॥
 पाष बजावां पूछ पिब । कसा मा । मंगाव ।
 ईश्वर दिव्य बिब आ वसो पूछ हसा पाव ॥३३॥ ६७

१७—चारवा

मात-पिता मै बीमरै बंदू बीसारै ।
 सूरं पूरा बागवी चारण बीवारै ॥१॥

१। हे बनिता ! मैं क्या हूँ या बीर क्या—हम बाग को बगवां
 भइ ममझकर बस । बाग सुने देखकर मारा जगत ईश रहा है अब कि
 रय बीर को इकठ्ठर कचक भेक नारद ही ईकते हैं ।

टि०—कदा कदा है कि बीर को बीर-वसि पारं इत्यन्तर महर्षेय
 और नारद असह होते हैं बीर निकम्बिबानकर इकते हैं ।

२। हे बनि ! तुम ऐसे बर्ग के बस पा सिर को लामित का जाया
 जाया हू । बगवी नही मयी तो जाने है कनी बीम-पचीम बगदिवा मोक
 मंगवा बूगा ।

३। हे वसि ! बगवत के पूछकर बगवी को तो नाक मंभा कामा
 पर गयो हुई प्रतिष्ठा को किन्तु बकल बीमघोम ? मैं तुकार-तुकार कर
 पूछती हूँ ।

१८—चारवा

१। माता-पिता बूझ आते हैं; नार्ह-बन्धु भी सुखा देन ह। पर पर
 हू बीरों की क्या को चारण बाव रकक ह ।

रण हालीजै पारणा ! चाहे भव लग चैन ।
 करै मुहक जिसही कहा विध सो दूर बसै न ॥ ॥
 आमा पक्षी ओझण जागइ । जीमण जाग ।
 रण मझता भइ दूर को सुणसी सीधू रग ॥१॥
 भाट । घणा दिन आगता बुझ भूला भू-कंठ ।
 रहियां नहै पीर-ही जाणा बिरह जपठ ॥४॥
 अ रिण स बिहारीयता अ मझता व्यग-भूठ ।
 है पारण रिण जिस गया ? किमरिंस गइ रजपूठ ? ॥२॥
 भारत डंका दे रह्यो थाया बीह बहूठ ।
 केर जगायो पारणां । ऊषाया रजपूठ ॥३॥
 नर सुख गावस भीह जाणू कह्यो जगामो ।
 वझ बंधरी बीह जोग हुष भूमैदमो ॥४॥

१ हे पारणा ! जब कुछ में चको जब तक वास्तव हैकत रहे । बीर जैसी करनी के समझा बैसा ही बर्तान करी । वह बात दूर रहने से नहीं बन सकती ।

२ हे कोकिलों ! भात्रबोसलों पर बीर रंजनहलों के पास गीत गाये में मझा जागे रहते हैं । जब जागे कर्वा नहीं पड़ते ? कुछ स गिरता हुआ कीम बीर दूर स तुम्हारे सिधू रग को सुनेगा ?

३ हे भारती ! बहुत दिनों से कह रहे थे कि दुष्मी के स्वामी (राजा) पारन बुझ (की पाक) को भूख गया है । जब कुछ में बीरों के मित्र रहाने नहीं हम समझें कि तुम वास्तव में बिहद बखब करवैवाले हो ।

४ ओ कुछभूति स बिरहाते थे (प्रोसादिन करते थे) वे पारण क्रियर गये ? पार बिबर गद के ब्रजिज जी तखवारों से कट-कट मिरते थे ?

५ भारत दुकार रहा है, बहुत दिन हो गये, बीर ब्रजिज को नये हे उग्र फिर स जगायो ।

मनुष्य दुख को नीह में गादिल को जाया है ता हमके बिभ जागना बड़ा कहवा होता है (जागना बुझ समझा है) पर चंचरी की देखा दावे पर (बिबाद का देखा या जाने पर) पर को न्येदकर जगाया कथित होता है ।

जन्म-वट मोड़ खोट देखे दुग्न पायुँ दुसह ।
 आरुध चुमती जोट हिरदै सखदाँरी हयौ ॥८॥ ३०३

१८ पराधीन भारत

धोखे पड़यो घाप, पिह हिमाळै पीपळै ।
 आसु म्हरै घाप, भारत दुखियो भानिया ॥१॥
 बना विरंगा भाव पछु-पछी पिता पही ।
 आसु पहराँ आवु भारत दुखियो भानिया ॥२॥
 ममत्रै छाप मरै कबहु बछ्छै काछ्छै ।
 भरती बह मरै भारत दुखियो भानिया ॥३॥
 दीना कर संताप, पग-पग कया पाछ्छै ।
 धूँ बहावुँ घाप, भारत दुखियो भानिया ॥४॥

१. जब जर्मियन-बर्गों में बुराई बखतर दुसह दुख पाया है तब भारत उनके हृदयों में कबलों की चुमती जोट मारता है ।

२. हे भानिया ! भारत दुखी है बखला करीर बह पीछा पड़ गया है । वह हिमाळय की बर्गों के कण में पिघलकर बह रहा है, और आसु गिरा रहा है ।

३. बर्गों का कण विरंगा (विच्छेद) हो गया है । पछु-पछी भी पिछा में पड़े हैं । पहराँ के भी आसु निकल रहे हैं । हे भानिया ! भारत दुखी है ।

४. हे भानिया ! भारत दुखी है । भारत की भूमि पर तुम्हें उड़ रही है । तुम्हें के कण में वह रह-रहकर बछ्छे कछ्छे में डार भरता है और धमक बछ्छा है ।

५. बछ्छे तुम्हें दीये पग पग पर कया-बखर करते हैं (टीकों के आकार बरबकते रहते हैं) । हे लूण लूण उड़ाते हैं । हे भानिया ! भारत दुखी है ।

मदियां सोफ़ मिराट कारां छिछ रोदन करै ।
 पायस मूछै पाट, भारत दुखियो मानिय ! ॥१॥
 भारत दुख भारी मरणासू आसू मरै ।
 धुन अण्णम धारी, भारत दुखिया मानिय ! ॥१॥

१६ वीरपत्नी—रो मोलभो

मलबाम्म हो पौडम्मा सुप-नुप हीन्ही भूख ।
 पर-हाथा—उ हो गया वो दिक्का—में सूख ॥१॥
 दुसमण बेसां छूटकर, जे जाबै परदेस ।
 एजन । बुद्धिमां पैर लो धरो जन्मभो भेस ॥२॥
 दम पर छाड़ी ओठकर सहसां बैठिया जाय ।
 अम्माधी दिन-दिन अठै ओर जमाया बाय ॥३॥

२ वर्षों बाद में मदिर्वा पाद लोढ़कर बहती है के चित्तारी एक करकर बमक रही हैं भावो निरांत ओक छे स्वन करती है । हे भाविया ! भारत दुखी है ।

३ भारत को बड़ा भारी दुख है । करवों के कप में जौलू धर रहे हैं । उससे आठ आठक पुन जायस कर रही है (चिन्मा में दूना है) । हे भाविया ! भारत दुखी है ।

४ मलबाम्म होकर (वस में पाकिछ होकर) लो गये कारो सुप-नुप मुछा ही और पराधीन हो गये । इदक में बह बड़ा दुख है ।

५ दुरमन बेस को छूट कर विदेश जे जा रहे हैं । हे राम् ! मदिर्वा पदन लो और जमाया बेस जायस कर लो ।

६ गुम लो शरीर पर साड़ी जाड़कर सहसां के भीतर जा बैठे । यहाँ अम्माधी दिन-दिन प्रभुता बहाल जा रहे हैं ।

दूध बनायो माय-रो, डीन्डो देस गुलाम ।
 सखाम सुद मेज़वा कर दिया सुद सखाम ॥४॥
 भा गयी का पीरता का रजपूती खान ।
 दुश्मा-प मोनात हो ला बैलाय भूमिमाम ॥५॥
 रजपूती सख को दियो, सख-हीण्य सरदार ।
 पत-हीणा रजपूत हो मर-हीणा-मरदार ॥६॥
 पणचीन मारत हुयो प्याछा-री मनवार ।
 मात्र-मूम परतंत्र हो बारबार फिरबार ॥७॥
 दीवर, बड़ा बटेर भर सुस्ता सूर सिकार ।
 दूधकां रजपूती नहीं नाम सिध रजपार ॥ ८ ॥
 बिस कावो है सरण हो सरवरिया-री याह ।
 है फंठां बिच भास को पापरिया-री याह ॥९॥

१. माता के दूध को खवा दिया दूध को गुलाम बना दिया ।
 स्वर्ध दूधरों की सखामी कैते से या खच दूधरों की खवानी
 है ।

२. वह पद्मेवाम्बी पीरता क्यों पयी ? वह रजपूती नाम
 की ? रोमियों के हुकमी के निजारी होकर यमिसाव को कीकर
 है हो ।

३. रजपूती ने काल को को दिया । सरदार सख से हीन हो गये ।
 भी । तुम प्रतिष्ठा से हीन और बुद्धि से हीन राजपूत हो ।

४. प्याछों की मनुहार में (तुम्हारे कराल पीले और निजाले)
 । पराधीन हो गया । मानुनृति पराधीन हो काय इसके लपकर खवा
 जात बना । बार-बार निजाम है तुम्हें ।

५. दीवर बना, बड़ेर बना कारमोश और लुहार का सिकार करते
 हीन हो गये । तुम 'सिद्ध' नाम को चारण कनैसाके हो । सिद्ध नाम
 देवों के किन्न इस पद्म-वर्णियों के सिकार में कीड़े पीरता यहीं ।

६. या को जहर कावो या सरोवर की गहराई की सरण को (दूध
 तो) का मने में रेंडया पहन को ।

वीरपणो भारण करो, या कायरता छोड़ ।
 पैरो खोहो मान लै मूढो खेबै मोड़ ॥१०॥
 मरु कसूमरु पैर सो, कसो कमर सरभार ।
 बरखी भीर कटार ले हुको सुरंग असभार ॥११॥
 पाछा फिर मन गल्लक म्यो पग मत बीज्यो टार ।
 कट भक्त पाज्यो खेत-म पर मत पाज्यो हार ॥१२॥
 सीर राज-री होय तो हूं भी चखू साथ ।
 दुसमन भी फिर देख लै म्हा-रा हो-हो हाथ ॥१३॥
 यो सुभाग आरो छगै जह कायर भरतार ।
 रंभापो लागै मखो, होय सूर-सरदार ॥१४॥

२० उद्बोधन

बाजी ली बंगाल महापट्ट पधिया सरह ।
 पग धकिया पंचाय, दणक रूखा दसोठका ॥१॥

१. इस कायरता को छोड़कर वीरता को प्राप्त करो, जिससे
 यह तुम्हारा छोटा मान लें और मूढ़ मोड़ लें (पीठ दिखाकर चले जायें) ।

११. तुम्हारी बल पहन को कमर में लकड़ार बाँध लो, और
 बरखी और कटार लेकर जाइ पर नवार हो जाओ ।

१२. पीछे मुड़कर मत देखना पैरों को मत दिखाया रख-लेन में
 कट भले ही जाना पर हारकर मत जाना ।

१३. आपकी अनुमति हो तो मैं भी साथ में चखू जिससे दुसमन
 हमारे भी खेन्दो हाथ (खड्ग) देख लें ।

१४. यह सुभाग पारा लगता है जब पति कायर होता है । और
 जब वह गुरवीर और सच्चा सरदार होता है तो बैरम भी चखा समता है ।

१. बंगाल व चाये बहकर बाजो ली मर्ह मरये भी बदे पंचाय
 २ भी पैर आग बढाये पर देख क योग (राजस्थान क निरामी) दुबके
 ४४ है ।

पर गुजर-री घाऊ डगमग पड़ भासण दुधै ।

७। रजपूत अनाक ताक रक्षा मयितव्य-नै ॥ ॥

राम-सू बम्भान सक्रिया नर ससार-रा ।

एरा परा परमायु अवपतियां । जागी व्यवे ॥३॥

ठिरिवा-री तरवार वीरा जाम्ही बीबड़ी ।

निहर नटै-री नार, वीरस किम छाड़े पुरख ॥४॥

रजपूत ज्योति

पर निज घासक धूबतो सासक रही निसक ।

बही बात दासक मयी अहो विवाता-बंठ ॥५॥

जग रक्षायाम् से रक्षा विरयाम् घर-बीद ।

छर्मा-म जहिया तिसे जीवाम् बस नीद ॥६॥

परतां परा घर धूबतो दास्यता विगपाळ ।

अव-बी राजपूताधिया जयती म्हाळ बंवाळ ॥७॥

१ गुजरात भूमि की जाऊ से बड़े-बड़े सिंहासन भी डगमग डोकाते हैं । पर हाऊ । राजपूत (राजकुमारी) हुआ बाने सुवचाय भावी को देख रहे हैं ।

२. इस भूमि के बालक से भी लंकार से बड़े-बड़े बख्शान पार नहीं प छके से । हे भूमि-विजो ! इस भूमि को देखकर ही अज जगमो ।

३ इस भूमि की वारी की जवार की बड़े-बड़े बीरों से अजमुख विजयी कमका । जहाँ की कारियां निहर ही वहाँ के दुख दुखान को नका केके कोर देते ।

४ जिसकी जाऊ से पृथ्वी कीरकी भी जो निज्जिक पृथ्वी का तात्न करती भी वही जाति घास दण्ड बनी हुई है । निजिज है विवाता के बंठ ।

५ जो जगम के रक्षक बने हुये थे, जो अरक्षी से जो पृथ्वी के स्वामी से जाऊ से ही तातों के भीतर बंद हुए बीर के अज रहे तो रहे हैं ।

६ जिसके वीर रक्षक से पृथ्वी कीर जाती भी जो विगपाळी को भी धाकदारते से बधाविर्वा जयते रणों के दूष से (रणों का दूष विवाकर) मचड घनिव की (घनिव-अज बीरों को) अज देती भी ।

राग-धारां सामै लक्ष्मी, हर न पही आतंक ।
 बिछा पहावर जातही पही बखरै पंक ॥१॥
 जमिया गिरभै बख सज्जन बमियां कल बर्गम ।
 बिज बख उगळ हिंद, ॥ ! या रजपूती प्यस ॥१॥
 ठाकर रहिया नाम-रा, ठा कर लो सै ठम ।
 ठाकर होठा बंस-में बस न इतो गुलाम ॥१॥
 ठाकर गेया ठग रखा, रखा मुख-रा चोर ।
 सै ठाकरास्यां भर गयी, ठाकर जपती चोर ॥१॥
 देखा भारत देस सख-मारग ममै सख ।
 रजमड कागै रैस रजपूता ! किम दिस पछा ॥१॥
 कुज रहिया रजनी किता जीवां दिसा बरस ।
 रजपूता ! ऊं पे रखा, रजपूती पया रस ॥१॥

८ छत्रपती की भाती के सामने पही रहने पर भी जिसका इरादा
 भाग्यविधि नहीं हुआ, वही भीर जाति आज कीचड़ में पही कौप रही है ।

९ जिसके जन्म जाने पर मित्रों के मुख विभ्रम हो जाते थे जिसके
 इरादे जाने से शत्रु कौपके थे और जिसके बख पर भारत उमड़ा था हाव ।
 वही राजपूती आज का रही है ।

१० हमने सब जगह वया जगा बिचा । जब बाकुर नाम क ही
 दानुर रह गये हैं । यदि देश में सबके बाकुर होते तो देश गुलाम नहीं होता ।

११ बाकुर कहे यने जब तो दग रह जमे हैं और रह गये हैं
 मुल्क भर क चोर । ये बाकुराभिर्वां भर गयीं जो बूले मकर के बाकुरों को
 जन्म देती थी ।

१२ देखो, जारा भारतवर्ष आज क जर्म को बख रहा है । राज
 पूती को कलक धम रहा है । हे राजपूती ! किम चोर जा रहे हो ?

१३ कीच रहे हैं ? किन्हे रहेंगे ? याको का क्या मन करना ?
 हे राजपूती तुम सो गये हो, बहुत रज मड हो जायेंगे ।

राजपूत खस

मन भीठा, मीठा बयण भीठा इस बिन पाव ।
 भीठा, दुरगुण बू डठा भीठा अर वसोव ॥१४॥
 पव पावर दिस पातव्य रज-वट-हीना रंज ।
 पया कर्कशा पेरिया, कम्बट, वंस-कम्ब ॥१५॥
 भासा-भसा मांड-सा रहे किरटा-कम ।
 भजिया बे-जूमरिया भजिया भूषा भूप ॥१६॥
 रचता आहव कडवा मचता हव मारव ।
 भव मोटर कडवा किरै मूँह मुँहास्य मव ॥१७॥
 दीपता जूमर से मूठी मूठा मांव ।
 पतख्ता-री पाकटा मूठी भर मुळअव ॥१८॥

१३ जब जो जैस रहै न दिखावी पवते हैं जो मन के कने बोखने के भावे, निकल होकर वंसवेवाके प्रतिष्ठ-रहित हीठ और दुगुनों को बोखवेवाके हैं ।

१४ जो दुगुन के पावर दिस के पतव राजपूती से रहित और दिस पवक कर्कशों से भरे हुये कडवाकारी और वेश के कर्कश हैं ।

१५ जो बोखी और वेश में जाँच जैस है, जो किरतों का कम बनावे रहते हैं जो मुख में नहीं जूमते जो पदे-बिसे होने पर भी निरुद्ध हैं ।

१६ जो कडवारी से मुख रचते हैं, जो जाँची को बचाते से से ही जब मूँहें मुँहासे मोहरों में उवते फिरते हैं ।

१७ मुख में जूमवेवाके जो घरदार कडवार की मूँहों की सुद्विषों में रचकर प्रेमिक होते हैं जाज के ही पतख्ती की जैवों में सुद्विषों रचकर प्रभव होते हैं ।

पीरा-रस-यी निचरुयै जावै जीवु सखइ ।
छापइ ऊठै तोड़-सा कबि वीठा बखसइ ॥१८॥

देखी राजा

हुक सै मंझे बेह प्रण पूत सम पाझता ।
मूठ प्रपंच सबेह, छूटीनै घर ही छपता ॥ १॥
जीवुय अहमे जाव सैख सिधर सिद्धाम-में ।
मांटी मीज पडाव परणा यिछलै पेट-नै ॥२॥
कै अंगर १जवास कै कै कइतां आकास ।
जाय बमारो राज-रो मालै प्रजा निदास ॥२५॥
हो म पराया हेत राखां ! यो घर राज-रो ।
रजा खगा क्यू कोत नाक-क्य बनिथा रखा ॥२६॥

१४ बीर रस से वे चौकते हैं अपना जीव उधर जाता है ।
कलहकारी के चारण को देखते ही तुरन्त भयक उड़ते हैं ।

२ सारे हुज्जों को अपने शरीर पर फैलकर जिस प्रजा को दुष्ट के
समान पकड़ते वे आज ऐसी बड़ी प्रजा मुँह प्रपंचा द्वारा घर ही में
छुदी जा रही है ।

२१ आपका जीवन खेतों, सिद्धों और सखामी में व्यर्थ बह होता
है । अरवाचारी मीज उड़ाते हैं और प्रजा पेट को रोती है ।

२५ आपका जीवन या तो (सिद्धार करते हुये) जंगलों में या
रक्षिताम में या (वायुवानों में उड़ते हुये) आकाश में बीता है और उधर
प्रजा नि दास भरती है ।

२६ हे राजाओं ! आप पराये नहीं बह घर भी आपका ही है ।
जिम खेत के जिमे आप बाढ़ क समान (रक्षक) बने रहते थे, अब उसी
खेत में वही जाने लगे हैं ?

निरम हित निर-भेद, ज नर चाहे राज-रो ।
 वस चुगड़ा हण वरद खेद माह पटको जिह्वा ॥२४॥
 कि । धनूनां फांस साव प्रजा-रो सीधियो ।
 सो भु वषायो सांस, व्याध्य-मुख ज्यू जाण्यो ॥२५॥
 पग-या घरवा पीठ नीठ जाण जग यू निभी ।
 पण भव परजा-पीठ झुकी मीट संकर किता ॥२६॥
 महिप हाजिया मज-महै परजा जितै अजाण ।
 फलद वरसा पूतवा वरसै मित्र प्रमाण ॥ ७॥
 समै फलदां जेज नह, प्रजा जठै सु मज्जय ।
 घर भूषण की वस चले, फल-म भइल दहाय ॥२८॥
 इस थीम जरमम दुरक भाव हुता फलसाह ।
 बै सिंघासन किठ गया सोचीनै नर-नाह ॥२९॥

२४ जो व्यक्ति निर्भय होकर याचना शुरू दिय चाहते हैं
 आपको इस समय चुगड़कोरी के वर होकर जहाँ में जा रहें हैं ।

२५ विचार है तुम्हें । कामों के अंदर फलितर तुमसे प्रजा के
 घर को जो दिया है (उक्त जवानी बात नहीं कहते ऐसे) । भीतर-ही-भीतर
 चुगड़कर हके हुके उस व्यक्ति को जवाबमुत्ती की मूर्ति समझ लेना ।

२६ दम-वग पर लौकिकों से पीड़ित हो । यात्र तक तो कठिनाई से
 तुम्हारी यात्र विध गयी है । पर जब प्रजा की लौक चुग वसी है मानो
 महादय का सीधरा बैल सुका हो ।

२७ राजा न जब तक समझ नहीं एकद्वी की तब तक राजाधी के
 स्वेच्छाचार कर दिया । पर तुम के वरदह वर्ष का हो जाने पर उमरु साथ
 मित्र कन्मा व्यवहार करना उचित है ।

२८ जब प्रजा झुझा रहती है तो तुम का बखर्कते देर नहीं
 जगती । भूकण पर क्या बल बल मकता है- बल भर में बड़-बड़ महक
 गिर बबल है ।

२९ कम थीर अर्थात् जीर तुम्हीं जाति में बादशाह हैं । उक्त
 व राजमिदमन कहो नव ? है राजाओं की ओर आ ।

राज करवा कस बार बंदूकें जार-सू ।
 परण कड़ियो फूस भली न र्थत गत भानिया ॥१२८॥
 परवा ही पछटाबिया अणचीत्या विवस्त्रोज ।
 काक भिका घर गंजवा, धाज मिछी नह ओज ॥१२९॥
 हिंसा बारणहार हिंसा-सू कोफत दुर्ग ।
 नम साईसा जार मटके कडम्बा भानिया ॥१३०॥
 क्रिया रज्यत-रै कोर मरवां । तिरमै माछण ।
 दिय-रो बबलै तोर, तिरवातं । बीजो समन ॥१३१॥
 क्रिया रज्यत-रै कोर वैतोका करवा विद्या ।
 काछविद्या-री कोर क्रिया रज-में शर्षी करी ॥१३२॥

१ इस में अर बंदूकों के बख के राज्य करते थे पर मजा के
 उमरों फूस की मारि कड़ा बिबा । हे भानिया । सीमा के बगल जमान जमान
 (सीमा के बाहर आना-पार करना) जमान नहीं होता ।

११ मजा के ही उमरों बिना सीमा के जमाना ही पकड़ दिया ।
 कल को सारी धूंधी को बाधकित करते थे आज उनके क्रियत्व सी सीने
 नहीं मिचती ।

१२ हिंसा बारवै बाकी हिंसा से ही छुल हो जाते हैं । हे भानिया ।
 जमान में बार कैते लाइलाह ओक ही आवाज में उड़ गये ।

१३ हे बीरों ! जिस मजा के बख पर तुम निर्भर होकर फिरते
 थे उसी का जोर आज बख रहा है । हे सरदारों ! समझ लेना ।

१४ जिस मजा के बख पर पकड़ते-पकड़ते ही (पकड़ ही) बिपति
 अपना लेते थे वो कड़ियों की कोर भी उमरों बरने ही शर्षी तुमके क्रिय
 रज में कर दिया ।

मित्र भाव-रै जोस दिखी-सू करता हमस ।
 यम अपार ऐस अपपतिबा ! अब आप-रै ॥३५॥
 शब्द का मानाप राज सदा निज रैत-रा ।
 शक्ति-सू जी पाप, सिरदारों ! लीजो समझ ॥३६॥
 घेस्ट हंग फिरेगास, रच्यत-सू रैखो बख्श ।
 होमो क्रिस्ती हस, सिरदारों ! लीजो समझ ॥३७॥
 आप बिबो नू ओक बचम मुख बंगरेज-रो ।
 भौगल गहल अमेर, सिरदारों ! लीजो समझ ॥३८॥
 इकमला बंगरेज, मदिर-मंडल राजै मरह ।
 है इसहो क्रिस्ती हंग सिरदारों ! लीजो समझ ॥३९॥
 बिगता नू राज-काय बचम देर बांरा बडा ।
 ही बाबै हिदवाय, सिरदारों ! लीजो समझ ॥४०॥

३५ मित्र भावों के बल पर दिखी (भी बलवाही) से मित्र जले
 है राजाओं ! इन भावों के (इस भाव के) बर-बर से भाव तुम्हारे
 मित्र रोव जमा हुआ है ।

३६ आप सदा अपनी प्रजा के माईत (माँ-बाप) बख्शाले थे ।
 वही भाव आप के संग था लगी है । है सरदारों ! समझ लेना ।

३७ प्रजा के दूर रहने का कार्योनी संग तुमने जब भी प्रजा रखा
 है । इससे क्रिस्ती की शक्ति होती है सरदारों ! समझ लेना ।

३८ आप के आप जो का बचम मुख ओ ओक भी वही अवमाना
 परमपुत्र बचम के अवमाना लिये । है सरदारों ! समझ लेना ।

३९ अंग का आपस में ओक-जग होकर तुम्हीं-मंडल पर बीरी के रूप
 में साधित होते हैं । जैसा प्रजा और किन में बाधा जाला है ?

४० हाथियों के अमान बचम आपके वही बचम देकर कभी बीजे
 वही करते थे । लीजो समझ दिगुलवान उनके भाव लेना । है सरदारों !
 समझ लेना ।

दीनों ऊपर हाथ आप डरता आप-सू ।
 सुखी न कुराणा अब सिरबारा ! लीजो समझ ॥४१॥
 म्यां गाया हित जाय यद्य कठता धारा बडा ।
 मोसो फाटक मांघ सिरबारा ! लीजो समझ ॥४०॥
 सरा रक्षा रणबान सत-हिम्मत-में सूरमा ।
 हँसे सफ़्त हितबाख सिरबारा ! लीजो समझ ॥४२॥
 अब स्वारथ-में आप बीखरगा कुम्ह-बहुरी ।
 अब रसा-वळ भाव सिरबारा ! लीजो समझ ॥४३॥ ३६०

२१ स्वतंत्रता—युद्ध

नवीन क्षत्रिय

देस हेत बलिदान भारत कप्री मूछम्मा ।
 सौ घटम्मा सनमान भायु गमायो भानिष्य ॥१॥

४१ आप आदि-काक से परीनों पर दूध रक्खे जाने से । परीनों के कन्दला-भरे पकन आपने कमी बहुरी धुमे (आपके हास्य में परीनों को रोने का कोई अवसर ही नहीं मिलेगा) । हे सरबारा ! समझ लेना ।

४२ जिस गाथों की रक्षा के लिये आपके बहुरे जाने दक कर कर मरते से उन्हीं का गछा आप फाटक में बाँककर मसोकते हैं । हे सरबारा ! समझ लेना ।

४३ राजस्थान के भीर उद्या अथ और पराक्रम में सुखीर रहे परन्तु आज तुम पर सारा भारण ईश रहा है । हे सरबारा ! समझ लेना ।

४४ अत्यन्त स्वार्थ में पकन तुम दुष्ट के गर्ल को मूछ गये हो । तुम्हारी जाति रक्षातक जा रही है । हे सरबारा ! समझ लेना ।

१ देश के लिये अपना बलिदान कर देना भारत के पुराने क्षत्रिय मूछ गये, जिससे उबका सारा सम्मान बह हो गया, अपने अपना महत्त्व को दिया ।

फरस पैस रुद्रक बन्धु इसो फांसी बहयो ।
 दिस गांधी-री देख भयो भरोसा मानिया । ॥१॥
 जादू-अम्बी-जोर परतंतर भारत पड़यो ।
 तप गांधी रै तोर भबई ऊठयो मानिया । ॥१॥
 कोनो राई फिरंग-री, ताके नद तरमार ।
 गांधी ! तैं लीयो गजब भारत-रो मुज भार ॥१॥
 पूगी समंदा पर सीसा समी मुतंत्रता ।
 तप-बळ गांधी तार भारत जायो मानिया । ॥११॥
 पड़यो धाक प्रचंड हिंसावासी हिंदू-मैं ।
 गिटगो जिहा धर्मक भारत गांधी मानिया । ॥१२॥

सुमापर्वद वसु

सूरै करी सुमास हाथा सेन्य हिंदू-री ।
 जगगी जगमी जास मारत युद्धै न मानिया । ॥१३॥

७. कदाचित् वह बहम करते कि ईसा चौथी पर क्यों क्या !
 परन्तु गांधी की ओर देखकर भरोसा हो क्या कि उसका यह कार्य
 धार्मिक था ।

८. माओ जादू की कला की से भारत परकण्ड हुआ पड़ा था । गांधी
 के तप के तेज से वह अकल्पित जोर लगाकर रुक जाया हो गया ।

९. फिरंगियों की शीशों को रोकना है, पर उसवार नहीं रकता ।
 हे गांधी ! तू है भारत के भार को अपनी मुवायों पर गजब धिया है ।

१०. सीसा के समान भारत की कलकलता समुद्र के पार पहुँच
 गयी थी । गांधी आपने तप के बल से उसे फिर भारत में ले आया ।

११. लश्करियों की हिंसा की प्रचंड बाढ़ देश में पड़ती थी ।
 हे भानिया ! भारतवर्ष में गांधी उनके बमक को बिगल गया (गांधी ने
 उनके बमक को बुर-बुर कर दिया) ।

१२. दूरबीन सुमापर्वद के लपके हाथों जायाव दिन्द की चौक
 तैयार की जिसकी जतिन भारत में जल उठी है । वह दुष्टों की नही ।

करता पैस क्येक न्यू इसो फांसी पड़्यो ।
 दिस गांधी-री इल भबो मरोसो मानिया । ॥१०॥
 जादू-खट्खो-ओर परततर भारत पड़्यो ।
 तप गांधी-रै ओर भबकै छठ्यो मानिया । ॥११॥
 फौजा रोखै फिरंग-री तम्कै नह ठरवार ।
 गांधी ! तैं खीचो गजब भारत-रो मुज भार ॥१२॥
 पूगी समझा पार सीता समी सुतंत्रता ।
 तप-बळ गांधी तार भारत काये मानिया । ॥१३॥
 पकवी चाक मर्चक हिंसावादी हिंद-में ।
 गिटगो जिह्म पर्मड भारत गांधी मानिया । ॥१४॥

सुभाषचंद्र बोस

सूरै करी सुभास हाथा सेना हिंद-री ।
 जागी जगमी जास भारत मुकै न मानिया । ॥१५॥

८. कदाचित्त यह कहना जरूरी है कि ईसा जर्मनी पर क्यों गया । परन्तु गांधी की पीठ देखकर भरोसा हो गया कि उसका यह कार्य धार्मिक था ।

९. माओ जादू की छकरी से भारत परकण्ड हुआ गया था । गांधी के तप क तज से यह लोकभेक ओर खपाकर उठ गया हो गया ।

१०. फिरंगियों की फौजी को रोकना है, पर ठकवार नहीं रखना । हे गांधी ! तू ये भारत के भार को जपको मुजराओं पर पजब बिया है ।

११. सीता के समान भारत की स्वतंत्रता लभुज के पार पहुँच गयी थी । गांधी अपने जप के बख से उछे फिर भारत में से जाया ।

१२. शकपाशियों की हिंसा की पर्मड चाक देख में पड़्यो थी । हे मानिया ! भारतजर्म में गांधी उनके पर्मड को निपल गया (गांधी ने उनके पर्मड को बूर-बूर कर दिया) ।

१३. गुरखी सुभाषचंद्र ने अपने हाथों जागाद हिन्द की फौज नया की जिसकी जिन भारत में जल गयी है । वह पुक्रे को गरी ।

मन्दर ऊँ भाव कर्म कोण रोऊँ करै ।
 है सुख हिंसाय मरै बाध कुण मानिया । ॥२६॥
 सोय साव समीप मीठा करखा मानबी ।
 मर्यादा-रो फँद भारी कटख मानिया ॥ ७॥
 गरी दियो जगाय, मारत नामो जोम भर ।
 डोरो भाव छाय मुब-बल नेहक मानिया । ॥२७॥

२२ साहित्य-री महिमा

सत अर्चन खरेख बारख ऊजळ ऊपरै ।
 दीवै पाँ-रो देख ज्यों-रा साहित्य जगमगै ॥१॥
 साहित्य ज्ञान-धन्य समीप प्राण समाज-नै ।
 रमै समी-अनुकूल जग फलदा करवा ॥२॥

११. सूर्य जगमगता हुआ उदय हो रहा है । उज्ज्वली कला को रोझने
 मन्दर कील कर सकता है । जब भारत स्वतंत्र हो चुक्य, इसमें कील
 उदय उत्पन्न कर सकता है ।

१०. सत्य समुद्रों को भीरा क्या देना अनुकूल के लिए सहज है
 पर परलोक के चंद की कद्रना बढ़ा करिब है ।

१८. बाँधी के भारत को जगा दिया और भारत कोश में भरकर
 जाग बल । उल जाज है मानिया । सुखायी क बल स नेहक डँबा
 उल रहा है ।

११. बारख उदयराज सदा और अर्चन खरेख सुनाता है कि उन्हीं
 का ईश जगमगता है जिसका साहित्य जगमगता है ।

१. साहित्य ज्ञान का ही स्वकृप है । वह जगज में बाव धरता
 है । उदयराज कहता है कि वह जगज के अनुकूल अपने कप का बरकत
 हुआ देखता है ।

धीमा घणु शायी गहरी जड़ ऊँची गयी ।
 लैरावण लागी भारत भ्याम्य भानिया ! ॥२०॥
 अयो समंद उफान की दुममलु शबलु करै ।
 राम अने रहमान भारत भन्य भानिया ! ॥२१॥
 दिव जगज्ज हाथी उठै प्रगट-रै भाग-री ।
 र । दुसण्या रोखी भारत-माता भानिया ! ॥२२॥
 उल्टे जिन असमानु तारामलु तूट रन्य ।
 हे मैषक हिवालु भूमी कवै भानिया ! ॥२३॥
 गया पाल-रै घाट, कोदा जायलु री करै ।
 विरट रूप पैरट भारत धारै भानिया ! ॥ ४॥
 कीड़ो-बल रै कोप कुजर नद जीवै करै ।
 नपी प्रजा पग रोग भारत जीतै भानिया ! ॥ ५॥

१ अत्याचारियों ने भारत की हज़ार जन को खूब दुःख पर दुःख से डकड़ते डकड़ गहरी जड़ी मयी । वही भारत की जन अब अहरे मारने लगी है ।

२१ समुद्र में उफान आ गया है । शत्रु बड़े कहीं तक दवा मड़ते हैं ? आज भारत में राम और रहमान दोनों एक साथ हो गये हैं ।

२२ अने प्रजा के दुश्मनों में जलिन की होको-लो डक रही है । अने । दुष्टों ने भारत-माता को खूब रौंदा धर ।

२३ मानो अमानुष उफान गया है । घटे-से डक रहे हैं भारत की अमल कोय से भर उठी है, पून्ही कपावमान हो रही है ।

२४ अनेकों मीठ के घाट कजर गन करौनों कजरने की लैवासी कर रहे हैं । आज भारत अर्पकर विराम रूप भारत कर रहा है ।

२५ चींटियों के दल के लुपित होने पर हाथो कभी वही जी सकता । आज भारत की प्रजा पग रोपकर जम गयी है । भारत की विजय अवश्य होगी ।

यह सब ठीक माह कर्म कोय रोझ करै ।
 सुखें दिखाय, भरी बाघ कुय मानिया ! ॥२६॥
 गेय सत समंद मीठा करया मानयी ।
 रत्नता-रा खैर भारी करया मानिया ! ॥२७॥
 गंधी दिखो जगाय भारत नाम्यो जोम भर ।
 रीचा जाय कठाय मुच-बल मेहरु मानिया ! ॥२८॥

२२ साहित्य-री महिमा

सत अरुंठ खैल बारय ज्यस करै ।
 दीवै बा-रा बस ज्वा-रो साहित्य जगमगै ॥२९॥
 साहित्य ज्यस करुन समयै प्राय समाज-नै ।
 रमै समे-बलुकर जंग फलतता करका ॥३०॥

२९. सूर्य जगमगाता हुआ बढ़प हो रहा है । जल्दी ज्वा को रोझने में बाधक क्यों कर सकता है ? जब भारत स्वतंत्र हो चुका, हममें क्यों केन्द्र उत्पन्न कर सकता है ?

३०. साथ धनुषी को पीछे बना देना मनुष्य के किन्तु चाहत है पर परलोक के चंद का कारण बना करिब है ।

३१. गांधी ने भारत को जगा दिया और भारत जोर में भरकर जाग उठा । सब जाग है मानिया ! युवाओं के सब से मेहरु रीचा उठा रहा है ।

३२. भारत उदयराज मगर भीर अरुंठ खैल सुवाता है कि उन्हीं में देश जगमगाता है जिसका साहित्य जगमगाता है ।

३ साहित्य ज्यस का ही स्वकृत है । वह समाज में साथ भरता है । उदयराज कहता है कि वह समय के अनुकूल अपने घर को बदलता हुआ देखता है ।

साहित्य-रो संसार आणै ऊँची आत्मा ।
 आत्म-बल आधार संकट मिटै समाज-रा ॥३॥
 जब-जब किसी समाज-में आबै पतन भयाग ।
 नीची संपत्ति बाबूकै हथ साहित्य अनुपग ॥४॥
 चौकै कम-ऊँचै आत्म रै आमास-नै ।
 साहित्य सरसाबै सगळै हंस-समाज नै ॥५॥
 राजनीत-रा-राग स पूरै विपद जब पूर ।
 दूर करै दुःख बेस-रो कै साहित्य कै सूर ॥६॥
 रे ! साहित्य रत्नबान-रो रुझो जोत रत्न ।
 सेवक बेस-समाज-रो ग्या-रो करो बतन ॥७॥
 रग-रग बहगो रोग दास-भाबू-रो बेस-में ।
 नखै करण निरोग थोक ज साहित्य ओजही ॥८॥

३ साहित्य का प्रचार आत्मा को ऊँची उन्नत है । और आत्म बल के आधार से समाज के संकट दूर होते हैं ।

४ जब-जब किसी समाज में गहरा पतन या बरत है तब-तब हसी साहित्य के प्रेम द्वारा नवी हुई संपत्ति बौद्धि है ।

५ साहित्य आत्मा के तेज को सुखे आत्म कमजोर है । वह सारे देश और समाज को सजीव और सुन्दर बनाता है ।

६ राजनीति के रोग के कारण जब देश पर पूरी विपत्ति या पड़ती है तब देश के दुःख को या तो साहित्य या शरणीर ही दूर करता है ।

७ अरे ! हम के समान जीति पाया राजस्थान का साहित्य राज्य को प्राप्त हो गया है जो देश और समाज की सेवा करने पाया वा । उसकी रक्षा का काम करो !

८ देश में हय-राग में हमसब का रोग घुस गया है । बसको बीरुम करने के बिना प्रेक्षमात्र जीवधि विविध रूप से, साहित्य हो है ।

साहित्य विना समाज-में साहस रहै न सत ।

सब साहस विन सयदा जीषण हुखी जगत ॥ ६ ॥

हुपिबा-नै नेहो ह्यै निरजीयां सरजीय ।

साचो सैय समाज-रो साहित्य सचय सचीय ॥ १ ॥

मिथ साहित्य क्रिय बार क्रिय जाती जगति करी ?

राजधान-सिपगार म्यो साहित्य डिगल गयी ॥ ११ ॥

गी डिगल, साहित्य गयो राजधान-रो रम ।

पय बूझ नीचै पक्ष्या अप्प्यै गुण अनुक्रम ॥ १२ ॥

अप्या साहित्य आसरै रही तील राजधान ।

माचो पय सुतत्रता साहित्य-रो सममान ॥ १३ ॥

रहो पीर राजधान-रो ! साचो मंच सचीय ।

जीयै इस-समाज बै साहित्य जिनां सचीय ॥ १४ ॥ ४ ६

४ साहित्य के बिना समाज में न साहस रहता है, न सत्य । सत्य और साहस के बिना जगत में जीवन सरा हुखी रहता है ।

५ साहित्य बुकियों को सहारा देता है वह जिजीवी को मज्जीब बनाता है । साहित्य समाज का सचा मित्र है वह सरा ही कल्याण है ।

११ साहित्य के बिना कब क्रिय जाती है जगति की है ? राजस्थान का अन्तर साहित्य चला गया और चलो मयी (जस साहित्य को जगदहली) दिगल जाता ।

१२ साहित्य चला गया डिगल चली गयी जो राजस्थान क मोन्दन थ । हजलिसे आज हम जग से अटककर नीचे जा रहे हैं ।

१३ अपय साहित्य के कारण राजस्थान सब में तीव्र रहा । साहित्य का समान हो सुतत्रता का लका जाय है ।

१४ है राजस्थान के पीरी ! कदा वह कदा मंच खपते रहा—के ही इस और समाज जोश रहते हैं जिनका साहित्य जोषित है ।

२३ उपसंहार

बूढ़ा बुढ़ा वाम जोड़धा सोई ब्यपसी ।
 ब्यावर लणी बिराम बांझ न जावै बीभरा ! ॥ १ ॥
 गुण-सागर बूढ़ा लणी गाह महली छार ।
 गीत-कवि त परधानदा बीभ पहरैदार ॥ ॥ ४१ ॥

१. दोहों (कविता) बूढ़ों और वामों (धन) को जिसने जोड़ा है वही (उनके जोड़े की कसिमाई को) जावेया । हे बीभरा ! प्रबुद्धा के देवता को बांझ नहीं जान सकती ।

२. गुणों का सागर बूढ़ा राजा है, माहा बन्धु की शिरोमणि (राजा) है गीत और कविता मंत्री हैं बूढ़े का पहरा देवेयारे सिपाही हैं ।

अनुक्रमणिका

अ (९)

अकलरुंदपारी	जयमयी	६१६
अजयविसबासी	जीववा	६१७
अथ स्वारथ-में आप		२०४४
अधिक सूर के हैं अधिक		१६१२१
अपना सहित आसुरै		२२११३
अथ गांधी आचार		७११२
अमल कचोमल कमल		१११४
अरि नेहा निम्न बंका		१११३
अथर ही आमाज सु		३१३

आ (११)

आ कमलेश्वरी कंवरी		१०१३४
आ घर-रोमी कमली धाम		
आप पदवा जोमगण		१७३
आज परे सासु ! कह		१२५५
आहो	अ बुद्धि	२५४७
आप जियो मूह हूँ		२०१३८
आपे ही जाणापुसी		६३
आपो समह	कमल	२११२१
आपय	मने	अनेक ६२४
आहू	मी	आचार ६१७
आदा	आसु	आह-रो १ १७७

4 (a)

[੨੬ ਅੰਕ ਪੰਨਾ ੨੩ (੨੩/੧੧/੨੦੧੬)]

数量 (個) 重量 (g) 単位

६५ ५ एषो ज. १५० १

11

६ (३)

१५४६-४७

{ 1 } दया ४ धर्म १०४

७ (२)

१३ कथावयस संज्ञ-मुञ्ज ४३

કચ્છ જિલ્લો બસપાન ૧૨૧ ૩

٤٤ (٨)

ଉତ୍ତରୀୟ ୧୫ ଶତାବ୍ଦୀ ଖ୍ରୀଷ୍ଟ

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम् । नमः १०१ ५

॥ भईगा वाच्या ! कामस १ । २५

ક્રમી ગાળ અર્થેસિય ૧૧૧ ૯

૩ (૩)

ਅਫ਼ਰ ਬੈਲ ਵਿਭਾਗਿਐ ਪਾਠ

બેઠે વસ્ત્ર વર્ણનાદા ૫.૨૬

મેલી સ્વચ્છતા અંગતે ૪૪

એ (૧)

भारत सरकार
भारत सरकार

औ (६)

જી ગૈલા જી વસ ઘર ૧૫૨૦

શ્રી પાઠશાળા જાગ ૨૧૧૭

(८१)

और बहै गत ऊपर १०।४६
और सुषा सुष ओहवै ११।३
और राग सब रागणी ४।२
और की फल जायिषा ३।४

क (४१)

कटकों तबल सुबकिषा ३।१३
करता बैस करक २।१८
कम्प कमा-बी राबत ४।२०
कलियो परगल आप-री ३।१४
कहां गयी बा बीगता १।३३
कंधणी बंदै बरग १।५१
कंत ! परे किम जायिषा १६।१८
कंब ! अयेको तू छिरी ११।७
कंब ! पण्यै गोरव ११।११
कंव ! म राखो कटक-में १६।६
कंव ! बरतीवै कुल ११।१२
कंव ! सुहायै म्म करो १६।७
कंधा ! करक न लोबियै ३।४८
कंधा ! रण-में जायकर ११।९
कंधा ! रण-में वैसकर ११।३
कंधा ! रण-में वैसतौ ११।८
काचो गार छिरी ५।२
काय दिवै धख ! मोहण १६।१०
कावर करे मांस-ह १६।१३
कापर भूडा जीयणा १६।१२

(८२)

गत्रपट महि खोट १५८
 ५८ भूकल नर काय २५
 काग तपै बल काय ८०
 पाटी कुल-री सोबपा ४१६

ग (१४)

गड सिर मधपा चाकणा ४०३
 गया बाल-रै पाट २१२४
 गाब हतै ठलेक गज ४०६
 गाबण कुटै रे गजप १६८७
 गांवारी सी जन्मिया ४४
 गाधी बियो जगाय २१२८
 गी बिगल साहिब गया २२१२
 गुण-सागर बूहो बखी २३१
 गै-बो पाका - कुरो ४३६
 गैवर गलै गलधियो ४३
 गाठ गया सब गह-य १११३
 गीमण 'म ह इतापुळी ४३०
 गीमणियो एतगणियो ४३१
 गीय ममाह देवजो १०

घ (१)

घर-घर घेर बिगारिया १ १२७
 घर पादा बि अणपय्य १ १२५
 घाय घण घर पतल २२२
 घय घरो सन बहे २२८

૧. જાણી પદે જાણી પદે ૩૫
 ૨. જાણી જાણી પદે ૩૫
 ૩. જાણી જાણી પદે ૩૫
 ૪. જાણી જાણી પદે ૩૫
 ૫. જાણી જાણી પદે ૩૫

• (2)

୫୫ ଟଙ୍କା ଏକ ବର୍ଷ ୧୧୧୧
 ୫୫ ଟଙ୍କା ଏକ ବର୍ଷ ୧୧୧୧
 ୫୫ ଟଙ୍କା ଏକ ବର୍ଷ ୧୧୧୧

4 (34)

जहकी १११३ जान १। ४
 मग १११४-५ ६ १११५ २०१६
 म६-७६ १११७ ममान-५ २०१८
 मनन) । म६ १११८ ६० १११९
 मनम ११२० ११२१-१२ ११२२
 म६मियां निरभे ११२३ म६म २ १२
 म६मपौत ११२४ न ११२५ ११२६
 म६ग म६ग११ ११२७ ११२८ ११२९
 म६न-स६मपु न ११३० ११३१
 म६दु म६की ११३२ ११३३
 म६म भाव६-१ ११३४ ११३५
 म६म म६ग ११३६ म६म ११३७
 म६म ११३८-१ ११३९ म६म ११४०
 म६म ११४१ ११४२ ११४३

(८०१)

दिव जायै तो जाण रे ८१८
 बीरुण भइखो जाय २ १०१
 मूय बन्नी जाय २१३
 न कळ भगता तो सली ११३०
 न मूवा तो अत भखा ११२१
 न रण में बिहरोयता १७५
 न करनी निण-री हुसी २५
 जोगय । पवसी जाय दळ १ १७३
 म्यां गायां हित जाय २ १४०
 म्यां घर बबळ सत्ताव २४४

भ (३)

मयार बाभ्यां भगत - जन ६५
 मुरै हम रंगरेवणी १६१८
 मू पकियां भइ केकळो ४१४

ठ (१)

ढीवा कर संताप १८४

ठ (४)

ठकराणी सतिवां भयै नून ८१०
 ठकराणी सतिवां भयै भनो ८१३
 ठाकर नेवा ठग रखा २०११
 ठाकर रहिया नाम-दा २ ११०

ड (२)

डिगता बह गळ जाय २ १४
 डाकर - रै नुम - डंड २ १६

ड (४)

दास - दयावा पाजिया ७१
 दास घसबी दळ मित्रो ७२३

रुणी माभी करे १०।४१

रस हठ बलिदान २१।२

घ (१८)

घण भाय जागो घणी । १ । ७

घण । मुख माण धरम-सू १६।३

घन मिळ जाणै सम क्रियां ३।३

घन- घळ घणियाप ४।१८

घन ले बीरा बाइबी । १ । २१

घन विघना । तो लेखणो ११।१८

घर गुर्जर - री घाऊ २०।

घर जातो ग्राम पळतता १।३

घर जिण घासक घूमतो २ । १५

घरता पग घर घूमती २ । १७

घण । जोड भव न्योपिया १६।२१

घणळ पणवै रे घणो । २।४३

घणळ सरीगो घणळ ह २।४१

घीर भगरो राज-रो १।२१

घीरविषां सुतो घणी १ । १२५

घीरां घीरा ठाकरा । १ । १८०

घांगा घण हाबी २१।८०

घात्रा पड्या घाप १८।१

न (१३)

नरिया नाऊ निघट १८।५

नर बायर जाणै नही १६।४

नर जिण धिर गात्रिय मही २।२

नर मुख गाण्ड नीव १।४०

नर पडाम बायर नरी ११।२

हाल पर्वता हू समी । १०।१
 हाल सुर्वता मंगरी ११।२७

त (६)

तगा ! तगाई मत करे ४।१२
 तगा न जावे लोल ४।११
 मन पर साही आइकर १६।३
 तिरिय-री तरवार ०।४
 नीतर कपा घटेर भर १६।८
 तोरण जाता पाइल १०।१

थ (१)

थाल बर्जता हू समी ! १३।

द (१०)

दस आमा वैतां दुई ६। ६
 दस झुता दस झुता २।४२
 दिन दिन भायो रीसतो १३।८
 दिन-म रेलू जूमतो १।२५
 दीनां ऊपर बाय २।४१
 दीपता जूमतर ४। १४
 दुग सै मन्त्रे रेह १०
 दुमियां-नै मन्त्रा दिवै २२।१
 दुसमज बसां लूतर १६।२
 दूष लबायो माय-रो १६।४
 दूडा दुरडा वाम २६।१
 दग सप्री ! मोटा गडा ४।२२
 दग सप्री ! होयो रम १।२२
 दली नै निज योग भी १।३५
 दया भारत दस २।१२

वरुणी माभी कहे १०।४१

वस हेत बज्जिमान १।१

घ (१८)

घण आरु जागो घणी ! १०।२७

घण ! सुण पाय घरम-सू १६।३७

घन मिळ जावूँ खम क्रियां ३।३

घन- बळ घणिवाप ४।१८

घन छे वीर धाडवी ! १।२१

घन विषमा ! तो छेकणी ११।१८

घर गुर्जर - री घाक २।२

घर जातां प्रम पळटता १।३

घर जिण पासठ घूमतो ७०।५

घरतां पग घर घूमती २।७

घसू ! ओके घसू गोविंदा १६।२१

घसळ पधवै रे घणी ! ५।४३

घसळ सरीसो घसळ हे ५।४१

धीर नगारो राम-रो १।२१

धीरविर्षा सूता घणी १।५५

धीरां धीरा ठाकरां ! १।२

धीगा घण दावी २१।२०

धीओ पदम्यो घाप १८।१

न (१३)

नरिषां नाऊ मिराट १२।५

नर अघर जावै नही १६।४

नर जिण तिर गाजिप नही २।२

नर सुग गावळ मीन १७।७

नह पदाम जायर नरा ११।२

০১ ১৯৭১ ৭৫ ৫২ ১ ১ ৫
 ০২ ১৯৭১ ৭৫ ৫২ ১ ১ ৫
 ০৩ ১৯৭১ ৭৫ ৫২ ১ ১ ৫
 ০৪ ১৯৭১ ৭৫ ৫২ ১ ১ ৫
 ০৫ ১৯৭১ ৭৫ ৫২ ১ ১ ৫
 ০৬ ১৯৭১ ৭৫ ৫২ ১ ১ ৫
 ০৭ ১৯৭১ ৭৫ ৫২ ১ ১ ৫
 ০৮ ১৯৭১ ৭৫ ৫২ ১ ১ ৫
 ০৯ ১৯৭১ ৭৫ ৫২ ১ ১ ৫
 ১০ ১৯৭১ ৭৫ ৫২ ১ ১ ৫

4 (21)

[illegible]

(३१)

पूगी सयेंवा पार २१।११
 पूगे नीठ पिछाणियो १०।२३
 पूबीचै गण - मोखियां ८।१०
 पूढ ! घणा दुन पावियो १६।१७
 पोर चपल्यौ पौडियो १०।२६

फ (४)

फिट कानूनो फाव २०।२५
 फिर-फिर मरका अ सदै ३।४
 फेरुट डंग फिरंगाव २०।३७
 फेबां ऐठे फिरंग-री २१।१०

ब (०)

बल छांडै कम-कम बरि ६।७
 बंभ सुभायो बीर-नू १।६
 बाघ सुभायी बापरा २।१३
 बाकी बी बंगाव २०।१
 बाप गया ले मायरो १३।६
 बाकक - सु बकमान ३।३
 बटां बापा कूय गुण २।६

म (२०)

मह एठ बहियो बट पई ६।२६
 मह सारै रेबां पई ८।६
 मभदे ताप भरेह १८।३
 मण्डर छी भाव २१।७६
 मनी प्यारो भीबहा ! २।७५
 भाग मल नू कमहा ! ११।१
 भागी बंभ लुकाव भग ११।१७
 भाट ! पण्ड रिम भावता १।७४

મ બી ૧	૧૫૯	મ ક મ	૧૧ ૧૨
મ બી ૧	૧૬૦	મ ક મ	૧૧ ૧૩
મ બી ૧	૧૬૧	મ ક મ	૧૧ ૧૪
મ ક મ	૧૬૨	મ ક મ	૧૧ ૧૫
મ ક મ	૧૬૩	મ ક મ	૧૧ ૧૬
મ ક મ	૧૬૪	મ ક મ	૧૧ ૧૭
મ ક મ	૧૬૫	મ ક મ	૧૧ ૧૮
મ ક મ	૧૬૬	મ ક મ	૧૧ ૧૯
મ ક મ	૧૬૭	મ ક મ	૧૧ ૨૦
મ ક મ	૧૬૮	મ ક મ	૧૧ ૨૧
મ ક મ	૧૬૯	મ ક મ	૧૧ ૨૨
મ ક મ	૧૭૦	મ ક મ	૧૧ ૨૩
મ ક મ	૧૭૧	મ ક મ	૧૧ ૨૪
મ ક મ	૧૭૨	મ ક મ	૧૧ ૨૫
મ ક મ	૧૭૩	મ ક મ	૧૧ ૨૬
મ ક મ	૧૭૪	મ ક મ	૧૧ ૨૭
મ ક મ	૧૭૫	મ ક મ	૧૧ ૨૮
મ ક મ	૧૭૬	મ ક મ	૧૧ ૨૯
મ ક મ	૧૭૭	મ ક મ	૧૧ ૩૦

મ (૩૩)

મ ક મ	૧૭૮	મ ક મ	૧૧ ૩૧
મ ક મ	૧૭૯	મ ક મ	૧૧ ૩૨
મ ક મ	૧૮૦	મ ક મ	૧૧ ૩૩
મ ક મ	૧૮૧	મ ક મ	૧૧ ૩૪
મ ક મ	૧૮૨	મ ક મ	૧૧ ૩૫
મ ક મ	૧૮૩	મ ક મ	૧૧ ૩૬
મ ક મ	૧૮૪	મ ક મ	૧૧ ૩૭
મ ક મ	૧૮૫	મ ક મ	૧૧ ૩૮
મ ક મ	૧૮૬	મ ક મ	૧૧ ૩૯
મ ક મ	૧૮૭	મ ક મ	૧૧ ૪૦
મ ક મ	૧૮૮	મ ક મ	૧૧ ૪૧
મ ક મ	૧૮૯	મ ક મ	૧૧ ૪૨
મ ક મ	૧૯૦	મ ક મ	૧૧ ૪૩
મ ક મ	૧૯૧	મ ક મ	૧૧ ૪૪
મ ક મ	૧૯૨	મ ક મ	૧૧ ૪૫
મ ક મ	૧૯૩	મ ક મ	૧૧ ૪૬
મ ક મ	૧૯૪	મ ક મ	૧૧ ૪૭
મ ક મ	૧૯૫	મ ક મ	૧૧ ૪૮
મ ક મ	૧૯૬	મ ક મ	૧૧ ૪૯
મ ક મ	૧૯૭	મ ક મ	૧૧ ૫૦
મ ક મ	૧૯૮	મ ક મ	૧૧ ૫૧
મ ક મ	૧૯૯	મ ક મ	૧૧ ૫૨
મ ક મ	૨૦૦	મ ક મ	૧૧ ૫૩

माता हित मरयो	१।२
माया से है ठाकरा ।	१६।६
मास्तरा घर-आगवै	६।१०
मिछे सिध कन माह	५।१
मूढ़ न दिवै पर-मारिचै	५।१४
मम अर्चयो हे सखी !	१०।४०
भँड नरु मिर रो मुगट	१६।०६
मैं परणवी परगिया वारण	१।१३
मैं परणवी परगिया जह	१।१०
मैं परणवी परगियो मूँदा	१०।६
मैं परणवी परगियो बाग	१।१४
मैं परणवी परगियो साजन	१०।८
मैं परणवी परगियो सूरस	१८।५
मगारिणु मर केई मुजै	५।१७

य (१)

मा मुछग गारा करी	१६।१४
ए (८७)	

रग - रग पहचो राग	२८।५
रखता आइतु कनका	८।४
रजपूना गुण पूजनी	५।२
रजपूनी आपुछ बिती	५।४
रजपूनी मल गा दिया	१६।६
रज-पह नई दीडी मन्दा !	५।०
रहना मंत्र सुरम	२१।४
रहता सुममण राग	२१।१६
रहा पीर रजधाम-रा ।	२८।१४
रज कहिय	५।६

बाँझ भइ बानैत	१	१६०
विष्य मरिषा विण जीविया	११	१६३
विष्य माघै बाँदै चूमै	८	८
विष्य साहित विष्य बार	२२	११
विष्य बहुचं बर संगवा	१०	१४६
विघन्य अपणै हाथ-सू	८	८
त्रिस ग्याथा कै सरण छो	१५	६
बीरप्यो घारण करो	१५	१०
बीरा-रस-बी विचरुपै	२०	१६
बीरै बोस सुभास	१	१६
बीर रहीलै राज घर	१५	१
बीरो - बाई वासही	१	१२६
त (८९)		
सली ! तन्हीका डैव-नै	१०	१४५
सली ! मरोसो नाह-रा	१	१८
सली ! हमीयै कँठरी असा	१	१२६
सली ! हमीयै कँठरी पाबी	१	१११
सली ! हमीयै कँठरी पूरी	१	११
सब अग्रह मंदम	२	१९
सब - हीणा सरबार	५	२
सबा रसा रणधाम	१४	३
समर सिपाह - सभाब	१६	८
सहिभ ! मा विह पाण्डियो	१	१
संपत्ति ! ओर निसक भय	११	१२६
मादुय जाये सुमा	५	८
मादुय विण ही छमे	५	०
सामू जाये वहीरी	१२	०
मादिम मत्र - मन्त्र	८	०

साहित - रा	मंवार	२७
साहित पिता समाज-में		७६
साई ! ओहा भोषडा		६५
साई-मू	साथो	रहू
सांभर	बारड	सीग-रा
सिर नह	सीगो	संबरी
सिध न	पूछै	चंद्रक
मील	राज-री	हम्य
सीगम्य	चक्रग	पुण्या
सीध	! इका	सोद
सीह	न	वाणा
सीहा	देस	विहस
सुन	मरिचो	सुत
सुत !	कर	जे
सुत	भाए	राज-रा
सुत	मरिषा	द्वि
सुध	-	हीम
सुठ	पर	-
सुठो	नाहर	नीह
सुधो	राजवत	परजणा
सूर	ग्याई	बर
सूर	न	पूछै
सूरा !	रण	म
सूरा	सोह	पिछाणि
सूरा	कोटो	सूरपण
सुबर	सूतो	नीह
सुरै	करी	सुमास

सुरे	सिखगायी	१।१५
सब-पमोवा किम	सबडा	१०।५०
सोनारी भुरे	कडे	१६।२५
सोण	सात	२१।७७
सो गुण	बाक	११।५४
स्याम	उपारे	संख्या ५५

॥ (२२)

हैमा वास्तो मानमर	६१
हाथल-वस्र निरमै हिवै	६१०
हिम्मत किम्मत होव	७१९
हिरणा काशी सींगकी	४१६४
हिक् जाणक होम्मी	२२१ ०
हिला धारणहार	२ १६०
हु भागे पाव हुये	१११०५
हु बलि तरी यजिया जय्या	१५१०
हु पछि तरी एजिया जिब	१५१६
हु बलिहारी एजिया बाज	१ १९९
हु बलिहारी मजिया	२२२९
हु पय्या जय्य जरा	२१६०
हुका भवत न कर रहे	६१२
हुकी ! की जय्यरज नहु	१०१६१
हुकी ! गद रहसी जरा	१ १९६
हुकी ! तिम-तिम-कत रे	१४१०
हुकी ! लीपूर यजिया	१ १५४
हे मिपजिया भाज जग	१११०
हु न पय्या हुत	० १२३
हुनै पर - पर हुत रे !	१ १६०

८ किसनसिंह (जेतकी)

महाँ मोरों मधुमरों, राखों याही रीत ।
 किसन बहाधा करहलै यद्यै न चढ़िया भीत ॥८॥
 कबिया माग पधारजो कँवर ज मुरघर बस ।
 फूपायो छास्यै जिसो साबायो किसनेस ॥९॥
 बारै जोड़ै किसनमी, जग्यो कँवर अमेर ।
 छेकन हूबो करणरै पद्मो पीकानेर ॥१०॥

९ महराणा जयसिंह (पढ़े)

सिंधुर दीपा छात सौ बैबर छपन हजार ।
 चोरसी सासण दिया जगपत जग-बाजार ॥११॥
 करणरै जगपत कियो कीरत आज कुरज ।
 मन बिज बोको छे मुखा साह दिखीस सरज ॥१२॥
 जगतो तो जाबै नही मात-पिताय नम ।
 तात-पिता रततो रहै निसदिन यो ही सम ॥१३॥

१ मुरघर बस—महाराज वहाँ 'जोबपुर' के विशेष वर्ष में प्रयुक्त व होकर 'राजस्थान' के साधारण वर्ष में प्रयुक्त हुआ है । बाबा फूपायो—कण्ठ का धुमसिंह वाली और नीर राजा । साबायो—साहूकार का पैसा ।

११ हे किरणसिंह, गुम्हारी जोड़ो का वाली बहिर का राजकुमार-जयसिंह है वा एक पद्मसिंह बीकानेर में करणसिंह के वहाँ हुआ वा ।

१२ जगत के वाली महाराजा जगसिंह के साथ श्री वाली कृष्ण हजार जोड़े और चौरासी गोयों के पराने दान में दिये ।

१३ करणसिंह के बेटे जयसिंह के नीति के बारे में महाराज का कहना जिसका जोका मनमें छिये ही निहो के का पड़े ।

१४ जयसिंह माता के नि (जयसिंह कह कभी वा-वा नहीं करत) 'दादा का नाम (जयसिंह बना-बना

मोह, छरछे पारेषदा जगपतरै बरपार ।
पीबोन्ही पाणी पियौ क्यु सुम्माँ कोटार ॥१५॥

१ महाराजा भीमसिंह

राणै भीम न रुक्मिण्या बल बिन हीहाबोह ।
हय-गयंदा वठो हबो सुबो न मेयाबोह ॥१६॥
भीमा ! तू माटो मोटा मगर माँयलो ।
कर राखूँ कठो संकर जूँ सेया ऊर ॥१७॥

११. ठाकुर जंगारसिंह (सोरा)

झाडाणी अस हैंटियो माडाणी अग माँय ।
धीरत-ईहा कोरहा जाता सुगा न जाय ॥१८॥

१२ हे परमात्मा ! हमें जगत्सिंह के दरबार के कर्तुल बनाया
रख-रख पीबोन्ही में पानी पियेँ और कोटार में अन्न चुनत रहें । (पीबोन्ही—
दूधपुत्र का सुप्रसिद्ध पालाक) ।

१३ महाराजा भीमसिंह ने जोक भी बिना बिना दान का (जिस
केन दान न दिया हो वेना) नहीं रखा । हाथी का हाथी और गाये दान
करता हुआ वह मेयाव का व्यवहार नानो धामी तक नहीं करा है ।

१४ हे भीमसिंह ! तू बड़े बहादुर का पत्थर है जिसे मैं अपने पाम
रखूँगा और संकर की भाँति तुम न करोगा ।

१५ हे काहत्यायक चंदा ! तुमने जंगल में जवरुंदरी बर का
मूर बिना । कीर्ति के काद सुनों के बीच जाये पर भी नहीं तुमारे जायेते
(जंगल कोरहा-हिज महक) ।

महापद्म प्रताप का उत्तर

तुरक कहासी मुग्य पतै हण्यन-सूँ, इच्छंग ।
 ऊगै भ्योही ऊगसो प्राची बोच पतंग ॥११॥
 मुसी हुँत पीयूष कमध । पटको मूखों पाय ।
 पछटण दे जतै पतो कममों सिर कैषाय ॥१२॥
 सोंग मूँह सहसो सको मस-मस जहर सपाह ।
 भव पीयूष ! जीतो ममों वैष तुरकसूँ बाह ॥१३॥

आठ्ठा दुरसा कृत

अरुबर पोर बीबार डेंपाणा दिवू अपर ।
 जागै जग-बातार पोहरै राख प्रतापसो ॥१४॥
 अरुबर समैह अबाह तिहँ जूषा दिवू-तुरक ।
 मेबाको तिण माहि पोचण फूझ प्रतापसो ॥१५॥

११ भगवान् अकस्मिन् इस तरीक (जर्जर जन्म) में प्रताप मुग्य से अकबर के सिव तुरक सङ्घ ही कहलवायेंगे बीर सूँ जहाँ उमराव नहीं पूर्व दिशा में उभेगा ।

१२ हे रामोच दूध्नीराज ! कुली से अपकी मूँकों पर तान दो अब एक बचनों के सिर पर लक्ष्मण पञ्चावने के लिए प्रताप जीवित है ।

१३ यह प्रताप अपने माने पर जॉग का महार सहंगा नवीति बरान्तरवाले का बस अनुज के सिव निव शैला (अकबर) बोधा है । हे बीर दूध्नीराज ! तुर्क के धान्य बचनों के निबाह में निजको बोधो ।

१४ अकबर और जल्लकार है जिसमें सब दिवू मित्रा-बन्ध हो गये । परन्तु जगत का बातार राखा प्रतापसिंह बहरे पर कहा जाय रहा है ।

१५ अकबर गहरा समुद्र है । उसमें दिवू भीर मुखमात्र चमी बूच गये । परन्तु उस समुद्र में मेबाह का राखा प्रतापसिंह कमल के फूल के भाँति उबर ही स्थित है ।

अरुणरिखै इकबार बागल फी सारी पुनी ।
 अजबगल असवार रहियो राज प्रतापसी ॥१६॥
 अरुणर जासी आप दिखी पासि वसत ।
 पुन-पसी परताप । सुनस न जासी सुरमा ॥१७॥
 अरुणर ! गरब न आप दिखू सह बाहर दुषा ।
 दीठा कोह दिबाण करतो कटख कटहरे ? ॥१८॥
 मन अरुणर मजबूत फूट हीरबों बजबर ।
 कपूर-कम कपूत पकूँ राज प्रतापसी ॥१९॥
 अरुणर कीन्हा चाह हीवू नूर हजर दुषा ।
 मरुपाट-मरुजाट पग लागो न प्रतापसी ॥२०॥

१६ अरुणर ने एक ही बार में सारी बुनिया (के घाँव) के बाग
 लगा दिया पर राजा प्रतापसिंह जिहा बाघ के बीचे पर ही खचार रहा
 (अरुणर ने अपने कबीलस्थ सरदारी आदि के बीचों पर दाग लगावने की
 रणकारी की थी) ।

१७ अरुणर स्वयं जका जानका और दिल्ली वूमरों के हाथों में बली
 बागरी पर है मरुधीर और दुष्म की राशि मरुजसिंह ! ठेरा सुबक कमी
 नहीं जायगा ।

१८ हे अरुणर ! तुम्हें मन मत कर कि जब दिखू ठेरे कपूर बन
 पड़े । क्या किसीने बीबाब (महाराजा प्रतापसिंह) को कटहरे के घाँव
 कटके करके देखा है । कटका-मरुपाट, कथाक सुक-सुककर पकाम करना ।

१९ असाउबाण दिखूनों में परस्पर गूट है और अरुणर का मन
 रह है । यह मायत है कि कश्मिरी को बीम में केवल प्रतापसिंह ही कपूर
 रह गया है (बाकी तो सभी कपूरों की भाँति मरुत बहवा मानते हैं) ।
 इस भी पकड़ लूँ ।

२० अरुणर ने चाह किसे जो सभी दिखू राजा अक धक करक
 उमक कामरे हाजिर हागब (और कबीलका रबीकार कर जो) पर
 मेराफ का मरुपाटकर राजा प्रतापसिंह वमके बीचों नहीं रहा ।

मणों आगम्य माथ निवृ नही नर-भाबरो ।
 सो करतब समराय पाळै राण प्रतापसी ॥२१॥
 बुझा बबरा बाट पाट तिकन पहणा बिसर ।
 आग-त्याग-स्वत्रयाट पुरो राण प्रतापसी ॥२२॥
 कहै न नामै कंष अरुबर डिग आम् न बा ।
 सूरज-वंस सर्वष पाळै राण प्रतापसी ॥२३॥
 अरुबर कुटल अनीस, और बिटल सिर आदरै ।
 रघुदुम-वचन-रीत पाळै राण प्रतापसी ॥२४॥
 खोवै हिन्दू बाण संगपण रोवै सूरज-सू ।
 आरण-कुम्हरी आन पूजी राण प्रतापसी ॥२५॥
 अरुबर पबर अनेक, कै भूषण भेष्य दिया ।
 हाथ न छागो हक पारस राण प्रतापसी ॥२६॥

२१ जो नरों का माथ है उड़का मस्तक मोख्यों के जागे नहीं झुग सकता—इस कर्णव का पावन कबल समय प्रतापसिंह ही करता है ।

२२ जिस मार्ग पर बड़े बड़े हैं उसी मार्ग पर चलना चाहिये । जिनमें से इस वत का पावन करेवाला थोक काइरा (बचाने) और बाण (पैरे) से पूरा महाराजा हो है ।

२३. वह राधा व सो कमी अकबर के पास जाता है और व मस्तक ही झुकाता है । प्रतापसिंह सूर्य-वंस के सम्मन्ध का पावन करता है ।

२४ हमारे दिगड़े बुझे राजा अकबर की कुमिह जमीति को सिर पर रखकर आदर हैंते हैं पर राधा प्रतापसिंह रघु के कुल की उचम रीति का पावन करता है ।

२५ हिन्दू बाणा को बाण करते हैं और मुसलमानों के साथ विवाह-सम्मन्ध स्थापित करते हैं । आन आर्ष-कुल की पूजी तो नेकमात्र प्रतापसिंह ही (रह गया) है ।

२६ अकबर ने अनेक राजाकुसी पारसों को हथड़ा कर रखा है । पर पारस परभर के समान थोक राधा प्रतापसिंह अकबर के पैरी में जाकर नहीं गिरता ।

मांगा घरम-सहाय बाबरसूँ मिहियो मिहम ।
 अकबर कर्मो आय पकै न राज प्रतापसी ॥५॥
 मुग दित स्याम-ममाण हीवू अकबर-बस हुमा ।
 रासीखा मगराज पजे न राज प्रतापसी ॥६॥
 अकबर पूर अजाण हिया-कूँ छाडै न इठ ।
 पागो न साराज पाण पणपर राज प्रतापसी ॥७॥
 अकबर हियै उपाट रात दिबस लागी रहे ।
 राजपट-यट-समराट पाटप राज प्रतापसी ॥८॥
 जग जाहा जूमर अकबर-फा चाँपै अचिप ।
 गङ-राज्य गुजार पिह-म राज प्रतापसी ॥९॥
 अकबर कमै अनक नम-नम नीसरिया जपन ।
 अनमी रहियो ओइ गुहमी राज प्रतापसी ॥१०॥

१. घरम की सहायता के बिना सहायता माँगा अकबर न मिहता था ।
 ऐसी परम्परा के राजा के बिना राखा प्रतापमिह अकबर के पैरों में बाबर
 नहीं गिरता ।

२. सुख-भाग के बिना हिन्दू राजा गोरखों की भाँति अकबर के बख
 हो गये वर राखबाँधे मिह की भाँति राजा प्रताप उनक बँध में नहीं जाता ।

३. मोक्ष और मृत्यु अकबर की दृष्टि की (चोरों) छूट गयी है जो वह
 अपना हठ नहीं छोड़ता । राजा के राजा अनवाला राखा प्रतापमिह
 उनक पैरों परनेवाला नहीं ।

४. अकबर की दृष्टि राज-दिन उभरा रहता है । राजा प्रतापमिह
 अचिपों के धर्म का राजा करनेवालों में पारवी मजदूर है ।

५. उगत में जो अकबर न पाता है जैस राजा भी अकबर के पैरों की
 मजा काठ है परन्तु गुहमी पार गत का एक प्रतापमिह अकबर के दृष्टि में
 राजा काठ है (प्रताप के कारण अकबर के दृष्टि में मजा चिना
 हो रहता है) ।

६. अकबर के राज अनेक राजा गुह मुकबर के राज । गुहों पर दृष्ट
 प्रतापमिह ही उनक जाम नहीं गुह ।

भागै सागै माग, अमरत लागै ऊमरा ।
 अरुबर-सह आराम पेसी बहर प्रतापसी ॥४३॥
 अपय बर संकाय सावधी भूखो सुखै ।
 बुझनट जोड कपाय पैड म बंध प्रतापसी ॥४४॥
 अरुबर मैगल अथवा मोंमल बल भूयै मसत ।
 पचत्तन पल—अथवा फटके बहा प्रतापसी ॥४५॥
 धै सो अरुबर-काह सैपय कुजर सोंबठा ।
 बोंस ठो बहताह पंजर बया प्रतापसी ॥४६॥
 बडी विपत सह बीर बडी कीत लाटी बसू ।
 धरम-धुरंधर धोर पीरस धिनो प्रतापसी ॥४७॥
 जिजरो बस बग मोंहि जिजरो बग धिन जीवया ।
 नेको अपबस नोंहि, पणधर धिनो प्रतापसी ॥४८॥

४३ राजा प्रताप की को छाव छिन्ने भागता है और उदुंबर में उठे मयूत के समान खगते हैं पर अरुबर की छाबीकता में रहकर आराम को वह बिच के समान समझता है ।

४४ प्रतापी सिंह के समान राजा प्रताप कंधन करके भूखा सो जाता है परन्तु कुछ का मार्ग खोजकर हूछे मार्ग पर पैर नहीं रखता ।

४५ अरुबर अह हाथी के समान मस्त होकर बल म बिचरल है परन्तु मोंछ कानैवाले सिंह के समान प्रताप अकेला ही उठे हथेली भार कर गिरा देख है ।

४६ वे जो अरुबर के मयूत बोले और हाथी है वे हे प्रताप ! ठो पीछे भलाते—भागते जस्मि पंजर मात्र रह गये हैं ।

४७ बीर राजा प्रताप ने बड़ी विपत्ति सहकर पृथ्वी पर बड़ी मारी कीर्ति जर्जन की है । हे धर्म की तुरी की भारण करनैवाले बीर प्रताप ! तुम्हारा दुःखान्न बन्ध है ।

४८ उसका जीवन बन्ध है मित्रका अमृत में कष्ट है । हे पणधर प्रताप ! तू बन्ध है क्योंकि अपवश ठेरे निरुध नहीं रहता ।

बेकामर धन ओह जस रह आवाँ जगतमें ।

सुप-सुप गोनूँ वह सुपन समान प्रतापसी । ॥४६॥

बारण सूर्यय टापरबा कृत—

बसा यंस बलीस, गुर पर गजबोर्तो-तणो ।

राजा-राजो रीस बहर्तो मन कोई करो ॥४७॥

बरा बी तो का ह पोरस-नजो प्रतापसी ।

छोरम अबरसाह अखियल आभरिया नहीं ॥४८॥

माथे मैगल लाग हैं बाही परतापसी ।

पौठ क्रिया ब भाग गोही साबू लख गल ॥४९॥

सौंग ज सोपरबाह हैं माही परतापसी ।

ज्या पावळ किरजोई परा प्रगही कुजरी ॥५०॥

माथी मोह मराह पावळ राज प्रयाद मल ।

दुजहो क्रिय ब्रह्माह बल मैगल राजपु लखा ॥५१॥

४ त्रयल में बल रह जाय-बही बजर बीर बजर धन है ।

५ ब्रह्मनिह । देह में सुख बीर दुख ता सपने क जमान बरखायो ह ।

६ बलीमो बली के बलिम गुलाम है बलक गृहिणीतो का

परावा बदा है । बल बल्ले समय कोई राजा या राजा कोष न करना

(बलीम बल कथन बारबल में लय है) ।

७ बलीम के आली बलीमनिह का बरखल पदे का वेद है

त्रयलो लुपनिह वर अकरा लो बीरा बली बही जाया ।

८ है बलीमनिह । लू ने हाथी क माथ वर कलवार बलीमो का

त्रयल हा दुख कर दिव त्रिज लख बीर व लानुन को दिविता अकर दो

दुख हा जलो है ।

९ है बलीमनिह । लू लुनदो बरखो बलीमो का बल हाथी क

यात्रा जाका त्रिजलो त्रय बल बलीमो । त्रय बारबल का कोदकर वर बि अ

जाली है ।

१० बलीम निहो वर त्रयमेवाह लो लख को बलीमनिह

बलीमनिह के बलीमो वर लो का हाथीको का म लो को ह कर दिवा ।

स्वनर-तणा सुमाण पारीसा पातल-तणा ।
 तै राहिया राण ! अकण-हुता ऊरवत ॥१५॥
 ओही भुज अरीत, तसलीम जहीन-गुरक ।
 भावै मिकर मजीत परसाद के प्रतापसी ॥१६॥
 रोहे पातल राण जौ तसलीम न आदरै ।
 होइ-मुस्तममाण ओक नहीं ता बाव द ॥१७॥
 बाकी चीतोकाह पातल पैठवेसों तपी ।
 रहयेया राणाह आया पण आया नशै ॥१८॥
 निगम निवाण-तणाह, नागदहा नरहर मुँही ।
 राबन-यत राणाह पिठ अपरसू प्रतापसी ॥१९॥

जीधपुर महाराजा मानसिंह कृत

गिर-पुर बेस गमाइ भमिया पग-पग भापरौ ।

मह अजसै मेयाह, सह अजसै सोसाहिया ॥६०॥

२२ अन्य राका मिही के बरतनों में परोसा भोजन करवाव
 (सुमखमान) हो गये । पलकों में परोसा भोजन था, हे उदयसिंह क पुत्र !
 अकेले दूने ही रगा है ।

२३ पराक्रम से ऐसी कुरीति हो गयी कि शत्रु तुरकों के आगे
 झुककर सखाम करने लगे हैं । ओक प्रतापसिंह ही समझियों के ऊपर
 सब-मन्दिर बरवाता है ।

२४ चिरा हुआ राणा प्रताप जब तक झुककर सखाम करवा
 स्वीकार नहीं करता तभी तक हिंदू और सुमखमान एक न हाकर पा है
 (यही ता मनी सुमखमान हो जाते) ।

२५ प्रतापसिंह तपुओं को काटने के लिए ता जावा पर उनको
 पाका सब की नहीं जावा ।

२६ महाराजा प्रताप अपने पदाह देत और मगनों का संवत्सर
 पहचो में पैर-पैर पर भरकटा चिरा जिनसे जात्र मवाए जावन्त ताई
 करता है और ताते सोमार्द्रवा जानि बर्बद करती है ।

प्रकीर्णक

बाही राण प्रतापसी घगतर-म बरछीह ।
 जाणक मीगर-जाण-म मुँह काक्या मरछीह ॥६१॥
 बाही राण प्रतापसी बरछी क्षपण्णोह ।
 जाणक मीगण नीसरी मुँह भरियो बरछीह ॥६॥
 पावस पक फलसाहरी अम बिपुली जाण ।
 जाण पछी कर-बर्रा पाथी बह-पुण्य ॥६३॥
 हीवू हीवूकर राणा ! अ रागव नही ।
 अकर लो अकर पा सा करत प्रतापसी ! ॥६४॥
 हिंदुपत प्रताप पत रागी दिव्यापरी ।
 मह पिण्ट संताप मत्त क्षपण कर आगसी ॥६५॥

६१ राणा प्रताप ने ककच से जो बरछी पहनायी वो ककच को जादू की दमती की ओर देखे निकली मानो मीगुर मरछी व जाण से व मुँह निकला ।

६२ राणा प्रताप ने ककच का मुँह बरछी पहनायी । वह धनो के साथ दमती की ओर इस प्रकार निकला मानो मीगुर मुँह का बरछी व नरकर बाहर निकली ।

६३ ककचमिह व जाकर बाहरीह को मना को इस प्रकार दि ईव कर दिया मानो वेह पुराण को पोथा ककचो के साथ यह मना व ।

६४ वे राणा प्रतापमिह ! कीह व हिन्दू अरि की दिह धर्म को रक्षा व कता को अकर लोही पुनिषा को लोकाकार कर दता ।

६५ दिह रवि मना के हिंदुओं को मरिहा को रक्षा को कीह दिकर कही को मरकर लो ककचो मीगुरा को ककच को ।

२—वाक्य

बाबू जूझ जग बस्यो, माता आधी ताम ।
 रे बाबू, ! तैं क्या किया रे बाबू पर्योय ॥६६॥
 माता ! बाबूक क्यों कहा रोह न मोम्बो प्राप्त ।
 ज जग माकूँ साहे-सिर हो कहियो साबास ॥६७॥
 सिध सिबाप्यो, सापुहस बौ लहरा न कहाय ।
 यदो जि-बुर मारिकै दिनम सेय बछाय ॥६८॥

३—महापद्म अमरसिंह

हाहा कूरम राठपूह गोर्को जोस करत ।
 कस्यो कान्दकाननै, वनवर बुवा फिरत ॥६९॥
 तैंबरौम् विस्ली गयी राठोर्को कनबूज ।
 अमर पखैयै खाननै सो दिन दिसै अज ॥७०॥

१९ बाबूक अब बूझने के लिये क्या एक माता आई थीर बोली—
 अरे बाबूक ! तूने वह क्या किया ? अरे तू सचमुच ही बाबूक है !

२० बाबूक उत्तर देता है कि हे माता ! तुम मुझे बाबूक क्यों
 कहती हो ! मैंने तो कभी रोकर आगे को नहीं मँगा (जैसे बाबूक मँगते हैं) ।
 मुझे तो अब मैं बाबूसाह के सिर पर लकड़ाने माकूँ सभी राज्यान्त कहवा ।

२१ सिंह, बाबू और सुपुत्र्य—वे छोटे होते पर भी छोटे नहीं
 कहाँते । वे अपने से बड़े जानवर को मारकर जब ही भर में उसे उड़ाने की
 कोशिश है ।

२२ जालपाया से आकर कहना कि, हाहा, कहाँ है आर राठोह—
 वे सब रईम आज राजमहलों में आनन्द कर रहे हैं परन्तु हम वनवार बने
 कुंठे भरत रह हैं ।

२३ जिस दिन तैवरों के हाथ से विस्ली गयी थीर राठोहों के हाथ
 से कम्बोज पूरा नहीं दिख महाराजा अमरसिंह जालपाया से कहते हैं कि,
 आज हम विचार्यै व रहा है (आज हमारे हाथ से मेवाड़ छूटा दिवाली
 गया है) ।

एहीम का उधर

भ्रम रहस रहस धरा, गिस जास सुरसास ।
अमर पिसमर ऊरै राम मरुषो, राख ॥७१॥

४—महारणा राजसिंह

माकपुरैय माळ ऊनपुरै धर धर दिया ।
मवल दिन्हीरो माळ ऊभा राणा राजमो ॥७२॥

(ग) धारवाह

रठोड़ वीरगनाथ

राठाहोरो मुन्-दिवा सीला गध न धरत ।
गर्भ भरनार न भयणा म भयना न भयत ॥७३॥

राज जगमोद

बाग-वग नय्य पाँदिया पग-वग बाही डाल ।
बाबा पूछे गानने जग क्या जगमाल ॥७४॥

७१ चर्भ रहसा, गु हागे नूनि मो रहेना जाँद मुवसमाव मरु षो
अमर । हे मरसासा अमरमिद । कना मरु न द रे वल्य चोर अंगार का
वाहन कने वाक वासासा पर रह विरवाय रमा ।

७२ माकपुरा को मूरक उवका पन कदपुर क वर पर म कदि दिया
कना दिया जासाय का कककद ग क कक मरसासा राजमिद कदा हे ।

३ हागेहो को मुन्-दिवा चर्भ निचाल (धारवाह) लल पमल मरी
करी । कि क कवि मरुयेकाक हो क जायेकाक मुना को कल मरी
रेका ।

४ दो उ मल क दू । हे कि उव-वम पर जात निर हे चार
रक-वम हा हाके वरी हे. जहा वरी को वक ल विवके अमर न रे ।

राय अमरसिंह राठौड़

उप मुकसूँ गमो कछा, हण ऊर सिन्धी कटार ।
बार कछण राखो नहीं होगइ जमभर पार ॥७५॥

दुर्गादास राठौड़

जननी ! कब ओइका कणे ओइका पुरमादास ।
मार मँहासो बोंभियो बिन धर्मो आकास ॥७६॥
कसबूँन कहिया जोय पर रसवालो गूइका ।
सोँधी कीधी सोय आधी आसकरम-वृत् ॥७७॥
बारह मासों बीह पाँउवूही रहिया प्रबल ।
दुरगाँ हेको बीह आकृष रक्षा न मासवृत् ॥७८॥

२ इस सभाकलावे अमरसिंह की 'गैबार' कहने के बिचे मुँह से
ग इतना ही कहा था—बार न हो चकर कहने भी नहीं पाया था—कि
अमरसिंह को कटार उसके करीर न पार हो पयी ।

७६ हे माता ! कुछ अबे तो जैसा बनना जैसा कि दुर्गादास था—
जिसने सिर पर मुँहासा रखकर उस पर बिना कम्मो के पावार के हो
आकास को नाम बिचा ।

७७ महाभारत अमरसिंह ने को कहा कि यह दुर्गादास पर के
गुरूओं की रक्षा करने बाधा होगा यह कबन आसकरम के बेटे दुर्गादास ने
सूच भन्धी तरह सत्य सिद्ध कर दिया ।

८८ पाँउवू भी बारह महीनों तक भय के जरे धिये रहे परन्तु
आसकरम का बेटा दुर्गादास अब तक जीता रहा अब तक भेक दिव भी
क्षिपक नहीं रहा ।

वलूसिह चौपावत

वलू करे गोपालरा सतिर्यो हाथ मैदेस ।
पदस्यहो पद मोहकर आब्यों ह्यो अमरेस ॥५६॥

कैसरीसिह (वसरो)

करिया करनाम जो न जुबन नयसाहसु ।
आ मोटी अबगाव रहती सिर मारु धरा ॥५७॥

कन्यारसिह

कियो अपरगमो रें करे, आपु कछा राठोह ।
मो सिर ऊरै मेहने हा सिर बंधै मोह ॥५८॥

कीरतसिह

वन महु ग्यागो वीर मार घणा रसु पोहियो ।
किरतो नग कोबीक बहिया गह कोषायरै ॥५९॥

भीमसिह

गह साप्पी गहखोत कर साप्पी पातल कमध ।
मुकुन्दनचारी मात भल्ली सुधारी भीरुहा ॥६०॥

७६ हे महाराज अमरसिह ! मोराराम का देस बहसिह सतिर्यो के माथ बहिस कहवाय है कि बाइयाही नया को पराजित करके मैं आपक पाल जा रहा हूँ ।

७७ हे कैसरीसिह ! बहिर व नयसिह स न निहता लो मारवाह को भूमि के मिर पर वह लोहा कलक (सुर के छिल्ले) रह जभा ।

७८ तुम ना कहता है कि हे राहीव कन्यारसिह या तिमस मर मिर न जभा उकर चीर को मिर पर मुकुन्द बांधा जाव ।

७९—अमरसिह कीर केर बहवारो से निहत हुआ चीर जो बहुत-से राजपूतों को मारकर मुहम्मद से न वा देवा कीरतसिह बहिर मूलप्राध १५५ के सभाय बाबुर के छिल्ले में जभा हुआ है ।

८०—हे भीमसिह ! तुम मुकुन्दसिह और रघुपतिसिह को पानुमे नर सुवाता नर जभा बरवा बिवा ।

पहर हेरु छग पास जड़ी रही नोनामरी ।
 गड में रोमारोसु भली मचायी, भीवडा ! ॥८५॥
 आरूणी अपराध महल न रुनी मुकनरी ।
 पावधरी परभात भली रुपाड़ी, भीवडा ! ॥८६॥
 सुकनू पूजे पाव, के पावत ! क्या करौ ? ।
 सुरगापुर-म साव भेला मेत्या भीवडै ॥८७॥

(ब) बीकानर

राज कौंसल

कमल राज भतीनरो सन बोभो बलसार ।
 बिख फौजल मौम्या जबर बौरह भूमी-बार ॥८८॥

पदमसिंह

भेरु बड़ी आबोध मोहखरै करतो मरख ।
 सोह बमारो सोच करतोहि जातो करणबुर ! ॥८९॥

८४—जायपुर दुर्ग का द्वार एक बड़ी तक बंद रहा । है भीवसिंह ! ऐसे दुर्गमें क्या रेकदेक मचायी ।

८५—जाज आचीराऊको मुकमसिंहकी बली महलमें रोपी । है भीवसिंह ! ऐसे उसी प्रमात को प्रतापसिंह की पत्नीको क्या कहाथा ।

८६—मुकमसिंह स्वर्गमें प्रतापसिंहसे जाज पूजता है कि है प्रताप ! कड़ी पुन कम आ गये ? प्रतापसिंह ने उत्तर दिया कि भीवसिंह ने हम दोनोंको स्वर्गमें साथ ही-जाज भेज दिया ।

८७—धटीक—बीकानरी जो कौंसलजीके धटीके से ।

८८—है करणसिंहके पुत्र ! मोहनसिंहकी खलु पर बधि ए भेज बड़ी भर भी आमा-पीडा लीकता तां तेरा लारा जीवन सोच करते ही भीज्य ।

कुसुमसिंह

कुम्हलो पूरै मोटनै यिहलो किम बीनाख ।
मो ऊमो वा पालटै भलै न ऊमो भाख ॥८८॥

(प) जयपुर

महाराजा मानसिंह

जमनी ! जख, जैसा जख, जैसो मान मरह ।
रौंडो सभै पराभियो काबल बाधी हर ॥ ८९ ॥

महाराज जयसिंह (कख)

घट न पाजै दहरौ मरु न मानै साह ।
ज्येन्द्रहाँ फिर आपस्यो माहुरा जयसाह ॥९१॥

राज शैलाजी (शैलावाटी)

गौर गुलाबै घाटयै खड आया मरग ।
पारा असकर मारणा बसख अभलैगग ॥९२॥

८८—कुसुमसिंह गुगले बुझता है कि है बीनाख ! तु वही बिछल रहा है । मो जख हुये तुम कोह विभक्त कर दे ता फिर मूल उदम नहीं हो सकता ।

८९—हे भावा ! तुम जये बी बावा जम जैसा कि मरहें मावमिह वा तिमये जवनी कबहार मरुह में जोको पीर कापुख तक रात्रयोमाका विस्तार किया ।

९०—मरिहो में खडे नहीं बरके पारसाह भव नहीं । भाके रूमजिह है मावमिह के वर जयमिह ! एक बार फिर वहाँ जायो ।

९१—हे राज ! तु है गौर पारवमें जाके है तुम काबल बाधी का नहीं । तुना है कि गुहारी लेवा मारयेवाका है वने भी देखे का जमिवाका है ।

राय शिवास्तिह (सीकर)

बोस यडा बरौ यडा, दिनों यडेरा हाय ।
सेलायत सिनसिहम् करतव यडा न कोय ॥६३॥

सादुर्तासिह (सेतकी)

सादुम्मा जगरामरा सिपल्ल डुरी बल्लम ।
राम-दुर्वाई फिर गयी लुरती फिरै लुहाव ॥६४॥

जुम्हारसिह (सेतकी)

जंगर बाँझो रे गुडो, राय-बाँझो जूम्हार ।
जेऊ ज आगौ असुर-गण भांम्मा बाँच बहार ॥६५॥

जोरठरसिह (सेतकी)

पणिया पाय बखाय जोराँ माइराँ ऊपरै ।
जदिबा नगाँ जहाय सानैम सवूळम्मत ॥६६॥

जमवासिह (सेतकी)

जगौँ ज बाँझो सेनकी, भइ बाँझो जममाळ ।
गडपत राक्यो गोइ म नवर्द्धीरो खाळ ॥६७॥

६३—दिनाँ—दिनो में जबस्या म । बडेरा—बडे । करतव ह—महात्म
कर्म या पराक्रम करने में बड़ा कोई नहीं ।

६४—जमरामसिह का बैरा सिंह करत पराक्रमी सादुर्तासिह डुरी यडा
है जिसके करतव बैरा में राम की दुर्वाई फिर गयी और लुहावै विपत्ती फिरती
है—हिन्दुआ का राज्य स्थापित हो गया और सुखसागर साम्रज्य विपत्ते
फिरते हैं ।

६५—जंगर—पहाड़ । गुडो—जहाँ जूम्हारसिहका स्थान था । जमज—
जमेजमे है । बहार—आसुर अर्थात् बलम । बाँचा—वराजित स्थान ।

६६—जदिबा—बडे हैं । सादुर्तासिह के पुत्र जोरावरसिह ।

६७—जममाळ—जमवासिह । राक्यो ह—जिसने नवकोटि (मारवाड़)
के राजा बाँकवासिहको मारवा है ।

सुखतानसिंह

मन-पायो पायो भरण, दुषी पतैपुर हल्ल ।
रहनी रे सुखतातिपा ! गौड ! पण्णा दिन गल्ल ॥६८॥

सार्वर्तसिंह

कडियो जाम्म कीचम रजपट-ईरो रण्य ।
सौवतिवा सुखताहरा ! तू काहण समरण्य ॥६९॥

(क) प्रतीतिक

छठीक छगो

छावी ऊपर सखवा, माथै ऊर पाट ।
बहुम्यो छग भाषेन, कठ-पीनर रहवाट ॥१०॥
तू रहतो न ठिग्य ठाळी ठाम्महर-सखी ।
पोझ ! हिमै बजाय ओझा हाथे जगसा ! ॥११॥
मामा मैगल ! सौभझे, बुनो न्य बायोह ।
बोडै धूपट बाँधनी अणैतराय बायोह ॥१०२॥

१०—इ गौड सुखतानसिंह ! कजपुर पर धाकमल बुझा और तूने मन
पाही छुनु पाही संसार में तेरी कमा बहुत दिनों तक रहेगी ।

११ इ सुखतानसिंह के बेटे सार्वर्तसिंह ! राजपूती का एक गहरे कीचममें
देस गया है उसे निजकाम में अथ तू ही समर्थ है ।

१२—राजा अणैतराय के पहाँ कठ के पिंजरे में कैद किया हुआ
राजा कहवाट धरमै माटखे कह्य है कि तुम जाकर मेरे मा के ऊँको
कहना कि तुम्हारा मामा कहवाट कठ के पिंजरे में पड़ा है उसकी छाती
पर बाँधे हैं और माथे पर राह नहीं है जिसपर छोटा चढ़ते हैं ।

१३—हे बाका जाति के पीर ऊगा ! जिसके निपट में तू कहवाट का
बही बरनी ठाळी जब तू ओझ हाथ ले गया ।

१४—कहा उत्तर देता है कि हे मैगल भाट ! मामा से कहा कि हम
एसो बात नहीं जानते, किंतु तजहार बाँधकर सबके सामने धनन्तराय को
बाँधकर से धार्यो ।

राव शिवसिंह (सीकर)

धौध पडा बरौ बडा, दिनों पड़ेरा होय ।
सेजायत सिधुसिंहसू करतन पडा न आय ॥६३॥

सादूसिंह (सेतड़ी)

सादूसिंह जगरमरा सिधुसिंह बुरी बछाय ।
राम-हुमाई फिर गयी लुरवी फिरै सुराय ॥६४॥

जुधरसिंह (सेतड़ी)

जुधर बौडो हे गुडो रण-बौडो जूमर ।
जैक न आगे असुर-गण भांग्य पोंन हवार ॥६५॥

जोरसिंह (सेतड़ी)

पखिया घाव बघ्याव जोरों मोड़रों ऊपरै ।
जहिया नगों जहाव सानैमें सवूम्यत ॥६६॥

अमरसिंह (सेतड़ी)

जगों न बौडो जेमड़ी, मक बौरो अममाक ।
गहपत राकबो गोद म नव रंटीरा छाक ॥६७॥

६३—दिना—दिनो में जयस्मा में । बड़ेरा—बड़े । करतन ह—महा
कार्य वा पराक्रम करने में बड़ा कोई बही ।

६४—जगरसिंह का पैदा सिंह सख पराक्रमी बाबू बसिंह डूरी था ।
है जिसके कारण देश में राम की बुवाई फिर यही और सुवाई विपरीत फिर
है—हिन्दुओं का राज्य स्थापित हो गया और मुसलमान साक्षक वि-
धिरत हैं ।

६५—जुधर—पहाड़ । गुडो—जहाँ सुधारसिंहका स्थान था । जैक-
जैकेनेवे ही । असुर—असुर आर्षात् यवन । भांग्य—पराजित करने ।

६६—पखिया—बड़े हैं । घावसिंह है जगसिंह के पुत्र जोरावर-
६७—अममाक—अमरसिंह । राकबो ह—विजये नकलीति (मा-
के राजा नौकसिंहको खरब हो ।

परिशिष्टरी अनुक्रमणिका

५

मकरिवाह	मुद्रवीर	१	कर्ने न जाने कब	मु०	१३
कर्म घनेक	मु	३२	कमवज राम मरीजरो	मु	५४
कीन्हा घाह	मु	२	करछारै जयपल किनो	वा	१३
कुटन पनीत	मु	२४	कवर्ष घक्कर । काव	मु	४२
हुट मवाह	मु	२६	कलियो जाम्ना कीचने	मु	२६
गैर न घाह	मु०	१८	कविता । मान पवाररो	वा	१
घैर घेंहार	मु	१८	किनो घणललो घु कही	मु	५१
कापी घाप	मु०	१७	कुछलो पूछी कोठनी	मु	८६
घार घनेक	मु०	२६	केहरिवा कण्वाह ।	मु	५
मक मवाह	मु	३७	कोठ हरह कीची कर्म	वा०	९
मक मवाह	मु	४५			
मक मवाह	मु	१५	कना व वाकी केठनी	मु०	६७
मक कवाट	मु	३०	कानाकान मवाहरो	मु	१५
मक वार	मु	१६	कानाकान मवाहरो कीठो	वा	७
मवाह मोह	मु	४६	कानाकान मवाहरो मोम	वा०	५
मवाह	मु	८३	कुपी हुंघ पीमल कमव	मु	१२
हवाह	वा	४			
हरी रोह	मु	३६	मक साची महलोठ	मु	५३
उल मुक	मु	७३	मिर पुर केत मवाह	मु	९
बेक मदी	मु	८५	मोहित मुन वन मक	मु	३६
मेही कुने	मु	३६	पीठ मुलाव नाटव	मु	२२
पे मो मवा	मु	४६	म्याह वी महामव	वा	४